पंचम अध्याय

नासिरा शर्मा की कहानियों में स्त्री संवेदना

नासिरा शर्मा हिन्दी साहित्य के महिला कथाकारों में एक अलग मौलिक दृष्टिकोण रखने वाली साहित्यकार हैं। उन्होंने साहित्य के विविध विधाओं में, खासकर हिन्दी साहित्य के गद्य विधा में अत्यंत यथार्थ लेखन किया है। यथार्थ इसलिए क्योंकि नासिरा शर्मा सबसे पहले एक पत्रकार हैं, उसके बाद साहित्यकार | समाज में प्रचलित धार्मिक कट्टरता, ज्वलंत समस्याएं, मानवीय संबंधों में उदासीनता, हक की मांग और नारी संवेदना को जागृत कराने वाले उन तमाम कारको के माध्यम वो अपने लेखन को एक दिशा देती हैं, जिससे मानव अपना सार्वभौमिक विकास कर सके।

मानव के सार्वभौमिक विकास हेतु उसके सांवेदिक मनोवृत्तियों को जागृत अवस्था में होना आवश्यक है। चित्तवृत्तियों को तीव्र गति से जगाने में कहानियों का माध्यम सबसे सरल विधा है एक साहित्यकार के तौर पर नासिरा शर्मा का साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण इसिलिये कहानियों के द्वारा ही हुआ। साहित्य की विभिन्न विधाओं में 'कहानी' एक महत्वपूर्ण विधा है। इसीलिए वह साहित्य की केन्द्रीय विधा के रूप में पहचानी जाती है। प्रेमचंद पूर्व युग में कहानी का उद्भव हुआ। तब से लेकर निरंतर वह नये मार्ग की खोज कर रही है, जिसमें मानव की तमाम वृत्तियों, समस्याओं को वह अपने कलेवर में धारण कर सके। आरंभिक काल में कहानी मनोरंजन प्रधान एवं उपदेश प्रधान रही। मुंशी प्रेमचंद ने उसे मानवीय धरातल पर लाकर जन- जन एवं घर-घर की कहानी के रूप में प्रतिष्ठित किया उन्होंने कहानी को विभिन्न पहलुओं ग्रामीण जीवन, कृषक, मजदूर, गरीब, अमीर आदि को केन्द्र में रखकर कहानी विधा को व्यापक रूप में प्रतिष्ठापित किया ।

प्रेमचन्दोत्तर युग में कहानी का बहुमुखी विकास हुआ। उसने वर्जित, उपेक्षित वर्गों की संवेदना को साहित्य से जोड़ने का कार्य किया। इसी युग में महिला कहानीकारों का आगमन भी साहित्य के कहानी विधा का एक नवीन प्रयोग सिद्ध हुआ। जिसमे औरतों के जज्बातों, समस्याओं, और संवेदनाओं का वास्तविक रूप अंकित होने का पूर्ण अवसर प्राप्त हुआ। ऐसा सर्वविदित है कि संघर्ष करके, समस्याओं को सहन करके कलम चलाना यर्थार्थ का प्रकटीकरण है। यही यथार्थ महिला कहानीकारों के लेखनी से मुखरित हुआ।

जिसे स्त्रियों का स्त्रियों द्वारा स्त्रियों के लिए लिखा गया साहित्य/कहा गया। महिला लेखिकाओं ने अनुभूति जन्य पीड़ाओं को संवेदनात्मक रूप से साहित्य में परिभाषित किया। इसमे नारी जीवन से जुड़े हुये लोक उपेक्षित संदर्भ सामने आ गये है। इन लेखिकाओं में बंग महिला (राजेन्द्र बाला घोष) श्रीमती होमवती, महादेवी वर्मा, कमला देवी चौधरी, मन्नू भण्डारी, ऊषा प्रियंवदा, ममता कालिया, सुधा अरोड़ा, मृदुला गर्ग नमिता सिंह, प्रभा खेतान, कृष्णा सोबती, इत्यादि की एक लम्बी श्रृंखला पाई जाती है। जिसमें एक विशिष्ट कहानीकार के रूप में 'नासिरा शर्मा' का भी नाम है साहित्य अकादमी पुरस्कृत यह लेखिका नारी संवेदना के ज्वलंत मुद्दों को अपनी कहानियों में उकेरती है।

चूँकि नासिरा शर्मा का साहित्य में आगमन 'कहानी' विधा के माध्यम से हुआ है अत: वे निरंतर अपनी कहानियों की भावभूमि यथार्थ और नारी जीवन के ईर्द-गिर्द रखती हैं जिससे आधी अबादी की आवाज बुलंद हो सके किन्तु उन्होनें कहीं भी स्त्री-विमर्श को केन्द्र में रखकर लेखन कार्य नहीं किया। अभी तक नासिरा शर्मा के 'बारह' कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं-

क्रम	कहानी संग्रह	प्रकाशन वर्ष
(1)	पत्थरगली	(ई०सन-1986)

(2) संगसार (1993)

(3) इब्नेमरियम (1994)

(4) शामी कागज (1997)

(5) सबीना के चालिस चोर (1997)

(5) खुदा की वापसी (1999)

(7) गूँगा आसमान (1999)

(8) शीर्ष कहानियाँ (2000)

(9) इन्सानी नस्ल (2001)

(10) बुतखाना (2002)

(11) दूसरा ताजमहल (2002)

(12) दस प्रतिनिधि कहानियाँ (2010)

इन कहानियों के बारे में गोपालराव का कथन उल्लेखनीय है- "नासिरा शर्मा ने अपनी कहानियों में मुस्लिम जीवन के यथार्थ को उनमे अनेक पक्षों के साथ प्रस्तुत किया है। पर उसके अनुभव का विशेष क्षेत्र मुस्लिम परिवार में नारी नियति और उसका अमानवीय शोषण है इन कहानियों को मुस्लिम समाज का दर्पण कहा जा सकता है। "(1)

नासिरा शर्मा की अधिकांश कहानियाँ भले ही मुस्लिम महिलाओं के शोषण का केन्द्रबिन्दु हों किन्तु स्त्रीयों की संवेदनाएँ समान होती हैं। उनकी समस्याएँ उनका शोषण समान होता है। चाहे वे किसी भी मजहब की क्यों न हों। साहित्य में नारी चेतना का संचार अत्याधिक मात्रा में सुदृढ़ होना चाहिए इस बात पर बल दिया जाना चाहिए न कि औरत किस मजहब की है। नासिरा शर्मा ने अपने लेखन का दायरा सीमित नही किया है, वे किसी सम्प्रदाय, धर्म, जाति या क्षेत्र में बँधकर कलम नही

चलाती वरन् सारी सरहदों, सीमाओं और बंधनों से आगे बढ़ मानव के उत्थान की बात करती है। उनकी कहानियों में स्त्री संवेदना ज्यादा मुखरित हुआ। है। उन्होंने अपने कहानी साहित्य के बारे में लिखा है- "सच्चाई यह है कि न मैं सीमा रेखाओं को पहचानती हूँ और न ही मेरा विश्वास है उनपर । मैं तो केवल दो हाथ, दो पैर, दो आँखे, दो कान, एक दिल और एक दिमाग-वाले इंसान को पहचानती हूँ। यह जहाँ भी जिस सीमा, परिधि में जीवन की सम्पूर्ण गरिमा के साथ मिल जाय, वहीं मेरी कहानी का जन्म होता है।"[2]

लेखिका ने अपने समस्त कहानी संग्रहों में वर्णित कहानियों की घटनाओ को नग्न यथार्थ के रूप में ही वर्णित किया है। चाहे वह नारी संवेदना को केन्द्र में रखकर लिखी गई हों या फिर अन्य किसी मुद्दों पर। इतना जरूर है कि शर्मा जी यथार्थ के वर्णन में अश्लीलत्व का हमेशा निषेध करती नजर आती हैं।

वे बात को मांसलता से बचाने हेतु इशारतन मात्र संकेत करके अपनी बात रखने की भरसक कोशिश करती हैं किन्तु इससे यथार्थ घटना के मूल में कोई बदलाव नही होता है। समाज में व्याप्त कुप्रथाएँ, अंधविश्वास, नारी-शोषण, एवं दिखावे के नीचे छिपा रीतापन प्रकट करके वे यथार्थ तथ्यों का आसानी से उद्घाटन करती हैं। उनके नग्न यथार्थ लेखन दृष्टि से बहुविध आलोचकों, पाठकों को कभी अरुचि भी होती है किन्तु उसके पीछे लेखिका का शोषण के विरुद्ध आक्रोश मात्र प्रकट हुआ है जिससे समाज में बदलाव हो सके। स्त्रीयों के प्रति लेखिका की दृष्टि संवेदनशील रही है। उनकी कहानियों में - समाज के भिन्न पात्र होते हुए भी समाज और पात्र जाने-पहचाने लगते है। समाज में नारी की भोग्य स्थिति को उभारकर उन्होने शोषक वृत्ति की ओर संकेत किया है।"[3]

लेखिका ने उन प्रश्नों को अपनी कहानियों में उठाया है जो स्त्रीयों के पक्ष में न्याय दिलाते हों। आखिर औरत को किस चीज से मुक्ति चाहिए ? आज की औरत किस बात से असंतुष्ट हैं? अधिकार में उसे क्या चाहिए? नासिरा शर्मा इन बातो को सिरे से नकारती हैं। उनका प्रश्न पुरुष प्रधान समाज से मात्र इतना है कि, औरतों को अधिकार देने वाला पुरुष होता कौन है? जिस प्रकार विभिन्न पहलुओं पर पुरुष स्वयं निर्णय लेता है, वैसे ही खुद औरतों को लेना चाहिए किन्तु हमारे समाज की प्रारंभ से ऐसी व्यवस्था रही है कि औरतों को अपना अधिकार मांगना पड़ रहा है। इसके संबंध में सीमोन द बोउवार लिखती है -"पुरुष ने सभ्यता के आदिकाल से ही अपनी शारीरिक शक्ति के कारण अपनी श्रेष्ठता स्थापित की उसने जो धर्म बनाए, जिन मूल्यों को गढ़ा, जिन आचरणों को मान्यता दी, वे सब उसकी अपनी सुविधा के लिए थे। उसके इस एक छत्र राज्य को औरत ने पहले कभी चुनौती नहीं दी। कहीं-कहीं कुछ महिलाओं ने व्यक्तिगत रूप में आवाज उठाई, कुछ आन्दोलन भी हुए किन्तु पुरुष ने उतनी ही मांगे मानी, जितनी वह देना चाहता था। पुरुष ने औरत का सब कुछ अपने हाथों में रखा। उसने स्त्री के स्वार्थ में उसकी नियति नही गढ़ी, बल्कि अपनी परियोजनाओं और जरूरतों से वह नियोजित हुआ।"[4]

लेखिका ने नारी जीवन एवं उसकी समस्याओं को अपने कहानियों में चित्रित कर उसके वास्तविक महत्व को, समाज में उसकी क्या उपयोगिता है का निदर्शन किया है। कारण कि लिंग भेद ने पुरुषों को मानसिक रूप से पंगु बना दिया है, अत: नारी संवेदना को एक आयाम देना आवश्यक हो जाता है, जिसे राकेश कुमार ने परिभाषित करते हुए कहा है कि - "स्त्रीत्व की स्थिति, चेतना को परिभाषित करना आज बहुत जरूरी हो गया है। लिंगभेद ने स्त्री को अस्तीत्वहीन, बाजीहीन करके उसकी अस्मिता को रौंदा है। पैतृक अनुशासन के नियमों द्वारा उसके बढ़ते कदमों को रोका गया है। दुनिया की हर भयानक घटना हमारे स्मृतिपटल को संवेदित है कर सकती है

तो स्त्रियों की अश्रुगाथा हमें संवेदित, उत्तेजित क्यों नहीं कर सकती । क्या यह आधी दुनिया की आबादी के उत्पीड़न एवं-मुक्ति का प्रश्न नही है।"[5]

नासिरा शर्मा की कहानियाँ मानव को सही अर्थ में मानव बने रहने का सशक्त दस्तावेज हैं जिनमें संवेदनात्मक तथ्यों का पुट देकर उसके सत्य को उद्‌घाटित किया गया है उनकी कहानियों में सभी तरह की मानवीय पीड़ा को उभारने की कोशिश की है। लेकिन उन्होंने एक स्त्री के संवेदना को उसके दर्द को कितना पहचाना है? और किस तरह अपनी कहानियों में उसे अभिव्यक्त किया है यह प्रश्न नारी संवेदना के परीपेक्ष्य में उठाना तर्क संगत है।

'पत्थरगली' कहानी संग्रह में स्त्री संवेदना

यह नासिरा शर्मा का पहला कहानी संग्रह है। सन् 1886 में प्रकाशित इस संग्रह में कुल 8 आठ कहानियाँ है। इन कहानियों के संदर्भ में लेखिका का कथन है- पत्थर गली की परिधि वह पिछड़ा समाज या वर्ण है जो आगे बढ़ने के लिए आतुर नजर आता है और अपने पिंजड़े की तीलियाँ तोड़ना चाहता है इस वर्ग की अनेक कठिनाईयाँ हैं- "जहाँ कोपलें फूटने से पहले झड़ जाती है, चिराग जलने से पहले मुरझा जाते हैं। शायद पढ़ने और सुनने वालों को ये बातें शायराना लगे, मगर शब्दों में छुपा यथार्थ वास्तव में भयानक और दर्दनाक है।"[6]

लेखिका ने इस संग्रह के अन्तर्गत जिस कहानी का चित्रण किया है उसके पात्र पत्थर की गलियों में विचरण करने वालों में से है । जहाँ दुखों का पहाड़ है, समस्याओं का सागर जहां हिलेर मारता है। मुसीबत में फँसी संवेदनशीलता कहीं खो सी गई है। पर कोई निराश और थकान नहीं है। अपनी पहचान के लिए वह जद्दोजहद के समंदर में गोते लगाते हैं, परंपरा की बेड़ियों को तोड़कर आजाद पंक्षी की तरह उड़ना चाहते हैं। सूरज का ताप और उजास ग्रहण करने के लिए तड़पते हैं और इस कशमकश में पत्थर से टकराकर लहूलुहान हो उठते है। "ये कहानियाँ धरती पर बसे किसी इंसान

की हो सकती हैं क्योंकि यह दर्द सर्वव्यापी है। फिर भी इन कहानियों की अभिव्यक्ति का स्त्रोत एक विशेष परिवेश है।"[7] नासिरा शर्मा ने इस विशेष परिवेश के अन्तर्गत नारी जीवन की आवश्यकता के अनुरूप न मिल पाने वाले सम्मान, उसके निर्णय और स्वतंत्र विचार की बेणी को खोलने की जिक्र करती है। उनके नजर में नारी संवेदना से ओत-प्रोत "ये कहानियाँ उस समाज और परिवेश की है जो वास्तव में पत्थर गली है, जिसे तोड़ना आसान नही । मगर एक छटपटाहट है निकास द्वार ढूँढने की और ये कहानियाँ उसी की तस्वीर पेश करती है।"[8]

इस कहानी-संग्रह के मूलपृष्ठ पर लिखा हुआ है-"नासिरा शर्मा ने जिस अनुभव जगत को अपनी रचनात्मकता के केन्द्र में रखा है, वह उन्हे और उनकी संवेदना को पीढ़ीयों और देशकाल के ओर-छोर तक फैला देता है। एक रुढिग्रस्त समाज में उसके बुनियादी अर्धांश - नारी जाति की घुटन, बेबसी और मुक्तिकामी छटपटाहट का जैसा चित्रण इन कहानियों में हुआ है, अन्यत्र दुर्लभ है। बल्कि ईमानदारी से स्वीकार किया जाय तो ये कहानियाँ नारी के जातीय त्रासदी का मर्मान्तक दस्तावेज हैं, फिर चाहे वह किसी भी सामंती समाज में क्यों न हो। दिन-रात टुकड़े-टुकड़े होकर बँटते रहना और दम तोड़ जाना ही जैसे उसकी नियति है।

नासिरा जी ने पत्थर गली कहानी संग्रह में नारी संवेदना के जिन विविध आयामों पर ज्यादा प्रकाश डाला है उन कहानियों का विश्लेषण एवं अनुसंधानपरक विवेचन यहाँ दृष्टव्य हैं जिनमें नारी की अस्मिता, संबंधों का स्थायित्व, उदासियों का तिमिर, स्वार्थपरकता एवं नारी संवेदना के विविध मापदण्डों का यथार्थ चित्रण हुआ है।

बावली

'पत्थर गली' कहानी-संग्रह की पहली कहानी है, जिसमें नारी संवेदना के पक्षों का मणिकांचन प्रयोग उभरता है नायिका 'सलमा' है जिसके इर्द-गिर्द कथानक घूमता है। सलमा और उसकी सास दोनो जातीय स्तर पर स्त्रियाँ ही हैं किन्तु दोनों की

संवेदना परिस्थितिजन्य दुबर्लता के कारण अलग-अलग हैं। 'सलमा' का विवाह खालिद के साथ होता है। खालिद और सलया में बेइन्तहाँ मोहब्बत होती है किन्तु शादी के 'सात वर्ष' गुजर जाने के बाद भी 'सलमा' एक पुत्र की माँ नहीं बन सकी इसका मलाल उसके सास के दिल में उठने लगता है। सलमा की सास अपने बेटे खालिद को भरसक समझाती है पर वह 'सलमा' से सच्ची मोहब्बत करता है अतः दूसरी शादी करने के लिए राजी नही होता है, उल्टा अपनी माँ पर ही गुस्सा करता है। अन्ततः 'सलमा' की सास के समझाने पर 'सलमा' स्वयं खालिद की दूसरी शादी 'सुहेला' से कराना चाहती है।

यहाँ पर लेखिका ने दो स्त्रियों की संवेदनाओं को अलग-अलग परिस्थितियों में संघर्ष करते हुए दिखाया है। एक तरफ 'सलमा सोचती है- "दुनिया के सारे रिश्ते क्या झूठे होते हैं? हर रिश्ता कुछ मांगता है। जब न दो तो दूर हो जाता है। मैं पानी से भरी बावली रिश्तों के नाम पर बँटती आई। हमेशा दिया, कुछ लिया नही। आज जब अपनी कोख से एक बच्चा न दे सकी तो मैं एक बेकार सी मान ली गई। मेरा और खालिद का रिश्ता इस औलाद को लेकर टूट गया। अगर खालिद मेरी गोद न भर पाते तो क्या मैं दूसरी शादी करती ? उस समय गोद लेने की बात उठती ! सब्र, कुर्बानी की बात उठती ! तो औरत के नाम के साथ क्या मर्द कुर्बानी नही कर सकता है? [9]

लहू रिश्तों का पानी हो गया है, जरूरत के आगे रिश्ते कुछ । मायने नहीं रखते इसी यथार्थ को उकेरने का काम नासिरा जी अपने कहानियों में करती हैं। उनके रचना धर्मिता की सबसे बड़ी विशेषता है उनकी पैनी दृष्टि जो स्त्री संवेदना का मानचित्र बड़े ही तगड़े रुप में खींचती है। कहानी नायिका का पूरा त्याग, सेवा एवं समर्पण, एक बच्चा न दे पाने के कारण समाप्त हो जाता है। वह बच्चा न पैदा कर पाने के कारण परित्यक्ता खुद को महसूस करती है। एक स्त्री अपनी सेवाकारिता के इस कुपरिणाम को सोचती है- "अपने को हमेशा से दूसरों में बाँटती आई हूँ, ठीक बावली के पानी की

तरह। जिस किसी को प्यास लगी, मेरे वजूद की सीढियाँ उतरता सीधा नीचे चला आया और अपना खाली बर्तन भरकर ले गया। मैं कुआँ तो थी नहीं जो किसी को रस्सी और डोल डालने की जहमत उठानी पड़ती, मै तो एक बावली थी-पानी से भरी बावली, जिसके पानी को कोई भी चुल्लुओं में भरकर अपने सूखे गले को तर कर सकता है।"[10]

वही स्त्री जो आज अपने प्यार को कुर्बान होते देख रही है, जब सास की भूमिका में होती तो शायद उसकी भी संवेदना जरूरत के हिसाब से बदल जाती। 'सलमा' की सास की ही तरह। जिस दिन खालिद की शादी होने वाली होती है, उसी दिन सलमा को चक्कर आ जाता है और वह जमीन पर गिर पड़ती है। 'सलमा' को उठाते हुए सास दूध की गिलास उसे पकड़ाती है। आँखों में आँसू भरकर । 'सलमा' कहती है मै ठीक हूं 'अम्मी' आप नाहक जहमत उठा रही हैं । 'अम्मी' सोचते हुए कहती हैं- "मैं औरत हूँ। औरत के दिल पर क्या गुजरती है, वह मे अच्छी तरह जानती हूँ। मगर बेटी, बुढ़ापे की लाठी भी तो होनी चाहिए।" 'सलमा' सास की बात को समझ रही थी किन्तु भारतीय नारियाँ अपने प्यार को किसी और के बाहों में देखना पसंद नहीं करती।"[11] सलमा के जेहन में बार-बार एक ही प्रश्न उठता आखिर खालिद दूसरी शादी करने पर इस लिए राजी हो गया कि, मैं माँ नही बन सकी ? यानि संवेदनाओं का रिश्तों में कोई महत्व नही? क्या जरूरत के आगे संवेदना हमेशा घुटने टेकती रहेगी। वह सोचती है- "जब मोहब्बत का गुरूर टूटता है तो फिर उसमें रह क्या जाता है? यही सोचकर 'सलमा' ने अम्मा के हाँ में हाँ मिलानी शुरू कर दी। सास बहू के इस बर्ताव से खुश भी हुई और दुःखी भी।"12

लेखिका ने इस कहानी में स्त्री संवेदना का बड़ा अनोखा मानचित्र खींचा है। दो अलग-अलग उम्र और किरदार की स्त्रियों को अपने-अपने जरूरत के हिसाब से

संवेदनशील होना है। बड़ा विरोधाभास हमारे समाज में है, इन्ही विरोधाभासों का पर्दाफाँस करती है नासिरा की यह कहानी।

कहानी की विषयवस्तु में नग्न यथार्थवाद है जो तथाकथित पुरुष प्रधान समाज को शायद रास न आए इसलिए लेखिका ने उसमें साहित्य कला की चासनी मिलाते हुए उसके संवेदनात्मक पक्ष को उजागर किया है- "मेरे वजूद की दीवारों पर बेशुमार ताक बने हुए थे, जिनमें विभिन्न कबूतरों ने बसेरा कर रखा था। ताकों के बड़े-बड़े दरों में गर्मी से तपती दोपहर से थके परिन्दे मेरे ठण्डे वजूद में आकर पनाह लेते थे। कितने- बेशुमार आए अपना दुःख मेरे वजूद की बावली में डालकर मेरे दिल की दालानों में बैठने लगे और मैं सब कुछ भूलकर उनमें अपने को बाँटती रही । में संबंध का धागा जोड़ बैठती और पीने वाला मुझे पानी से भरी बावली से अधिक कुछ नही समझता था। जहाँ आराम किया जा सकता था, दिल हलका किया जा सकता था, प्यास बुझाई जा सकती थी, मगर आखिरी साँस तक साथ नहीं दिया जा सकता था।"[13]

एक स्त्री, जिसके होते हुए भी उसका शौहर दूसरी शादी करने पर राजी हो जाय, जबकि दोनों में बेइन्तहाँ मोहब्बत हो ! कैसा मंजर होगा ? क्या उथल-पुथल शादी के एक रात पहले दोनों के मन होगा ? इसका बड़ा सजीव चित्रण इस कहानी में हुआ है। सलमा कमरे में दाखिल हुई और खामोशी से आकर पलंग पर लेट गई। दोनो जाग रहे थे। बात करने की किसी में ताकत नहीं थी। सलमा के दिल व दिमाग में तूफान उठ रहा था। खालिद मेरी मोहब्बत, मेरे हुस्न से थक गए हैं। अब उन्हें उनका नामलेवा चाहिए। कल इस घर की रात कैसी रात होगी ? क्या मुझसे यह सब बर्दाश्त होगा ?"[14]

संवेदनात्मक स्तर पर आहत कथा नायिका पूरे नारी जाति की प्रतिछाया बनकर खुद से सवाल-जवाब करती है- "क्यों न मैं चौथा रास्ता चलकर देखूँ ? तन व

तनहा, जब हर रिश्ता झूठा है, हर रिश्ता कहीं जाकर टूट जाता है तो फिर यह आडम्बर पात्रने से फायदा ? कल सुलेहा का भ्रम टूट गया तो ? शादी के बाद मैं यह घर छोड़ दूँगी। क्या होगा यहाँ रहकर ? 'अपने' घर में छोटी होने के नाते कुछ मिला नहीं। यहाँ बीवी बनकर भी सिर्फ आथमियाँ की हकदार और शायद.....कल वह भी नहीं।"[15]

नासिरा शर्मा नें रिश्तों के प्रति हो रहे मोहभंग और मोह में अंधे हो रहे लोगों के दोमुंहेपन को उजागर किया है। सलमा के द्वारा समस्त नारी जाति की संवेदनाओं, जरूरत के आगे तिलांजलि होते हुए लेखिका ने दिखाया है। सुलेहा से शादी करने के बाद खालिद को पता चलता है कि सलमा पेट से है, फिर भी होटल चला जाता है, यह स्थितिवि विपर्यय है । शायद यहाँ खालिद दोषी न भी हो किन्तु सुबह पश्चाताप की पीड़ा में वह सलमा के सामने आँसुओं का सैलाब लिए खड़ा है- "मरुभूमि में जिस तरह कभी-कभी बारिश बावली को ऊपर मुँह तक पानी से भर देती है और बाढ़ के वेग से जल-थल एक हो जाते है।"[16] वही हाल सलमा का भी हुआ था। लेखिका ने इस कहानी में नारी संवेदना का 'शीर्ष' रूप प्रस्तुत किया है, जहाँ स्त्री विमर्श का नगाड़ा कहीं नही पीटा गया है। यही नासिरा शर्मा की बड़ी विशेषता है जो उन्हें अन्य लेखिकाओं से अलग करती है।

पत्थर गली

'पत्थर गली' कहानी एक ऐसी लड़की के जीवन की घटना है जहाँ पिता की छाया उस पर नहीं है। इस कहानी की मुख्य पात्र 'फरीदा' है जो शीलता, योग्यता, शालीनता एवं शिक्षा में अव्वल दर्जे की हसमुंख लड़की है किन्तु घर में आर्थिक विपन्नता के कारण उसे अत्यधिक सघर्षो का सामना करना पड़ता है। फरीदा सिर्फ आर्थिक व्यवस्था का शिकार नहीं है वरन् शोषण करने वाले परिवार के विरुद्ध पनप रही चेतना का संकेत उसके भाई को हो जाता है जो सामन्ती मानसिकता से ग्रस्त है। फरीदा की माँ ममतामयी होते हुए भी रूढ़िवादी सोच की है, जिससे फ़रीदा का पूरा

जीवन अंधकार के गर्त में डूब जाता है फरीदा आगे पढ़ना चाहती है और शिक्षणेतर क्रियाकलापों में वह बढ़ चढ़कर सहभागिता करती है। किन्तु नवाबी खयाल का उसका भाई फ़रीदा को इस तरह लड़कों के साथ पढ़ने और विभिन्न आयोजनों में भाग लेने से मना करता है। फरीदा सोचती है - "मान्यताओं, मर्यादाओं, रस्म-रिवाजों की इतनी भारी बेड़ियाँ पैरों में पड़ी थी, जिनके साथ चलना तब ही संभव हो सकता था जब वे काट दी जाएँ। इसलिए हर बात पर जंजीरों की झनकार के साथ वह बस रेंग रही है। भविष्य भी उसका कोई चमकता सूरज तो नही जिसकी वह आशिक है, बल्कि एक अँधरा, सील, तंग बिल है।" [17]

स्त्री के ही ऊपर खोखली बंदिशें क्यों डाली जाती हैं? क्या पूरे समाज की मर्यादा की जिम्मेवारी सिर्फ औरतें ही ढोयेगी ? उसको क्या जीवन भर तकिया भिगोना पड़ेगा? क्या पुरुष की नवाबदारी कैंसर की तरह स्त्री संवेदनाओं को खोखला करती रहेगी ? इन प्रश्नों को उजागर करती है, यह कहानी ? नारी के संघर्षो का लेखिका ने बड़ा मनोविज्ञानिक चित्रण किया है फ़रीदा स्वयं से सवाल करती है, जो परोक्ष रूप से पूरे समाज के ऊपर एक-प्रश्नवाचक चिन्ह है

"तकिया भींग चुका है। सिसकियाँ रुकने का नाम नही ले रही हैं। आखिर वह अपने घर में इतनी क्यों घुटती है, क्यों उलझती हैं? यहीं पैदा हुई, पली-बढ़ी, फिर क्यों? उसे कुछ पता नहीं है। बस उसे महसूस होता है कि उसको इस दुख भरे माहौल से भागना है, पर कैसे..? उसे नहीं पता। पता सिर्फ फरीदा को इतना है कि उसे बचपन से ऐसा लगता आ रहा है कि केवल जीने के लिए पैदा नहीं हुए है "वह जो चाहती है, उसकी आत्मा की जो माँग है उसे वह कुछ भी नहीं मिल पा रहा है।"[18]

गृहस्थी के चक्की में अक्सर विवाहित महिलाओं को पिसते देखा जाता है, कारण कि दूसरे के घर से आई लड़की की शायद कद्र ससुराल वालों को न होती हो किन्तु फरीदा अविवाहित होते हुए भी गृहस्थी के कार्यों में इतना व्यस्त रहती है कि

उसे खुद के लिए समय नहीं रहता। जब वह गुशलखाने में जाती है तो एक घण्टे बाद वापस आती है। वह सोचती है- "कम से कम एक घंटा नल के बहते पानी के नीचे बेकार ही सही, मगर यह वक्त उसका अपना तो है।"[19]

गर्मी के छुट्टी के बाद, जब स्कूल खुलता है तब, फरीदा स्कूल के लिए तैयार होती है। उसकी माँ 'आज स्कूल' न जाओ तो कोई हर्ज है । कहकर रोक देती हैं। फरीदा झुझलाकर सोचती है "कभी-कभी अम्मी अपनी जिन्दगी की बेकैफ़ी का बदला उससे क्यों लेती हैं ? उनकी समस्याएँ, उनके बच्चे, उनका घर । वह न उनकी उम्र की है, न ऐसा रिश्ता है कि उनके जले-भुने कटुवचनों को सहन करे या जला-कटा उत्तर दे। उसे तो खुद माँ की देख-रेख, भाई-बहनों का प्यार चाहिए, मगर यहाँ तो जैसे सबने घर की धुरी उसे ही बनाकर सदा सारी समस्याओं का हल ढूंढ़ना चाहा है।" 20

घर में आर्थिक तंगी के बावजूद भाई के बढ़ते शौक, पढ़ाई में उत्पन्न बाधा, माँ की रूढ़िवादी सोच, बड़ी बहनों की परिवार के प्रति उदासीनता, अपनी खुद की पढ़ाई, घर की समस्त जिम्मेदारियों का कुशलता पूर्वक निर्वहन करने का बोझ फरीदा पर पहले से ही था ऊपर से कलाकेन्द्र और 'डिबेट' में भाग न ले पाने के कारण भाई के ऊपर रोष अलग था। भाई के द्वारा खोखले बोलबचन पर वही खीझ जाती है और खरी-खोटी सुना देती है। भाई भी अपने आपे से बाहर हो जाता है और बहन की मर्यादा को रौंदते हुए मार-पीट पर उतर आता है, जिसके कारण फरीदा सदमें में आ जाती है। वह सोचती है-"उसका दिमाग रोज होते नए हादसों को कबूल नही कर पा रहा था। आखिर यह किसकी साजिश थी जो यह घट रहा है। समय की, समाज की, परिस्थितियों की ।"[21]

लेखिका यहाँ स्वतः मुखर हो उठी है। ऐसा प्रतीत होता है मानो 'फरीदा', फरीदा नही! स्वयं नासिरा शर्मा समाज के सामने, परिवार के सामने उस तमाम आवाम के सामने प्रश्नवाचक मुद्रा में खड़ी हुई है। जिसने औरत और मर्द के मध्य

दीवार बनाने की कोशिश की उसको एक झटके में तोड़ डालने का कुशल प्रयास हुआ है। फरीदा ने ऐसा कुछ नही किया जैसा उसकी सहेलियों ने किया। नाहिद ने तो एक बुढ़े खूसट से शादी कर लिया। मरियम ने डॉक्टर समझकर कम्पाउडर से फोन पर पाकिस्तान में शादी कर ली। सालेहा ने बुर्खा उतार दिया। पर उसने कुछ नही किया। घर के द्वारा अत्यधिक दबाव पड़ने से वह पागलों की तरह चिल्ला उठी- "नहीं नहीं मैं उस लड़की में नहीं ढलना चाहती है जो अपना रास्ता किसी बेकार सहारे से बनाये मैं..नाहिद नही बनूँगी, जुलेखा बाजी की तरह चचा से गलत रिश्ता कायम नही करूँगी खुदैजा की तरह भी नही...मुझे आजादी दो! मुझे फ़रीदा बनने दो, मुझे मेरी तरह जीने दो, मुझपर रहम खाओ. मुझे सारी जंजीरों से, इस कैद से आजाद कर दो-- आजाद कर दो.. आजाद ।"[22]

रूढ़िवादी एवं सामंती मानसिकता के धनी फरीदा के बड़े भाई और माँ पुत्री के दुःख-दर्द को न समझकर, उसकी संवेदना को ठेस पहुँचाकर उसे पागल खाने पहुँचा देते हैं। फरीदा पागल खाने में शान्त रहती है किन्तु डाक्टर द्वारा घर का नाम लिए जाने से ही पागल हो उठती है। इस प्रकार लेखिका ने मुस्लिम परिवार की एक ऐसी लड़की की संवेदना एवं सिकन को यहाँ अंकित किया है जिसके अपराधी उसके घर के, स्वयं माँ और बड़ा भाई है ।

बंद दरवाजा-

'बंद दरवाजा', 'पत्थर गली' कहानी संग्रह की एक ऐसी कहानी है जो दो मित्रों के मध्य आपसी रंजिश के कारण उपजे विद्रोह और उस सामंती सोच एवं विद्रोह से बलि की बेदी चढ़ी एक ऐसी लड़की की कहानी है जिसमें लड़की और उसके प्रेमी का कहीं दोष नही है। सामंत शाही के कारण नायिका 'शबाना' की मौत हो जाती है जिसके जवाबदार उसके माता-पिता स्वयं हैं।

इस कहानी के मुख्य पात्र 'काजिम' और शबाना है। काजिम के पिता रईस मिर्जा एवं शबाना के पिता मीर साहब आपस में जिगरी दोस्त थे। पूरे गाँव और कस्बे में उनकी दोस्ती की मिसालें दी जाती थी। काजिम और शबाना बचपन के दोस्त थे। बड़े होने पर दोनों के बीच की केमीस्ट्री देख घरवाले दोस्ती को रिश्तेदारी में बदल देते हैं। आगत-स्वागत में कुछ कमी के कारण दोस्तों में थोड़ा मनमुटाव हो जाता है अत: जब शबाना ससुराल से मायके वापस आई उसके बाद सालों बीत गये किन्तु ससुरालवाले शबाना को बुलाने नहीं आते हैं। मीर साहब को यह बात बहुत खलती है।

उन्होंने भी यह संकल्प कर लिया कि अब अपनी बेटी को ससुराल कभी नही भेजूगाँ । 'रईस मिर्जा' और मीर साहब के आपसी मतभेद का शिकार शबाना और, काजिम को होना पड़ता है। काजिम अपनी पत्नी से मिलने की कोशिश जब भी करता, रईस मिर्जा अपने शान-शौकत का हवाला देकर रोक देते थे। विद्रोह पर उतर आया काजिम एक दिन छत पर अपनी पत्नी से मिलने हेतु गया। शबारात की रात थी। रईस मिर्जा ने शबाना और काजिम को देख लिया। वह बेटे को जायदाद से बेदखल करने की धमकी देता है तब काजिम कहता है- "घर लाने को आपने मना किया, मैने आँख बंद करके हुक्म की तामील की। मुँह से उफ न की मगर हर बात की एक हद होती है। हम घर पर नही तो दुनिया के किसी कोने में मिलने का तो हक रखते हैं। रही आपकी जायदाद । वह आपको मुबारक ।"[23] काजिम घर छोड़कर जाने लगता है तब उसकी माँ जहर खाकर मर जाने की बात करती है। काजिम जानता था कि उसकी माँ जो कहती है कर दिखाती है अत: वह अपना कदम वापस कर लेता है। शबाना के विरह में वह खाना-पिना सब छोड़ दिया था, सूखकर मानव का कंकाल बन गया था। वही हाल उधर शबाना का था, वह एक बार काजिम में मिलने को तरसती रही किन्तु पिता की जिद ने उसकी जिन्दगी को जहन्नुम बना दिया। वह सोचती.

"आखिर कब तक खानदानी मर्यादा को निभाना पड़ेगा शकारा आपा के खामोशी से शादी वाली रात को इमामबाड़े में जाकर जहर पी लिया था, मगर मुँह खोलकर कह नही पाई कि वह अपने मामूजाद भाई 'वाजिद' से शादी करेंगी - लाल सोहाग का जोड़ा सफेद कफन में बदल गया था । शर्म, हया, सबर, रहम ये सब औरत के जेवर है। नानी बताती हैं, उबटन मलते वक्त नाऊन ने उनकी उँगली तोड़ दी थी कई दिन दर्द को पीती, पैर को छुपाती दुल्हन बनी बड़ी मसहरी पर बैठी रही। वह तो पैर से पाजेब उतारते वक्त ननद ने फूली उँगली को देख लिया और फौरन डाक्टर को बुलाया खाला जान ने सारी उम्र भाई के घर शौहर के मरने के बाद काट दी, जबकि लाखों की जायदाद की मालिक थी। चाहतीं तो सबकुछ खरीद सकती थी।"[24]

शबाना की हालत देख उसके पिता की बहन 'नौशाबा मीर साहब को समझाने की कोशिश करती है। वह कहती आप लड़की वाले थे, थोड़ा आप ही झुक जाते। उस पर मीर साहब कहते हैं - "यहीं पर बुनियादी सोच की गलती है। लड़की वालों की ऐसी क्या मजबूरी है, जो वह लड़की कुर्बान कर दें। रईस मिर्जा काजिम की शादी कर सकते हैं तो मै भी शबाना की दूसरी शादी कर सकता हूँ।"[25]

पिता-पुत्री के संवाद में लेखिका ने पुरुष के अहंवादी सोच और स्त्री की संवेदनशील दृष्टि को बड़े साफगोई से चित्रित किया है। 'नौशाबा' कहती है- "कब तक आप लोग खानदानी इज्जत के नाम पर इंसानी कुर्बानी मांगेंगे भाई- साहब!"[26] मीर साहब कहते है- "जब तक मैं जिन्दा हूँ बीबी, खानदानी तौर-तरीकों में तब्दीली नही कीजा सकती।"[27]

नौशाबा के तेवर बदले हुए थे-"चाहे लड़की ज़िन्दा दर-गोश्त हो जाय ?"[28]

पिता और बुआ के आपसी संवाद को शबाना सुनकर सोचती है कि- "गुजरे कल की औरतें क्या थी ? बलिदान की मूर्तियाँ या फिर बलि की बेदी पर चढ़ाई गई बकरियाँ ?...ऐसी हालात में उसे भी जलते-जलते पिघलना है। मर्यादा की लौ को सिर

पर उठाए दम तोड़ना है। घूँट-घूँट इस दर्द के समुन्दर को पीना है। बड़े घरों की कहानियाँ उनके आँगन में दम तोड़ती हैं। ऊँचा खानदान मान-मर्यादा का कब्रिस्तान होता है जहाँ हर रोज एक नई कब्र खुदती है और बुजुर्गो की खाहिशों के कफ़न में लिपटी लाश दफन कर दी जाती है। मेरी कब्र भी मेरा इन्तजार कर रही है। शबाना सोच की 'गहराईयों' में उतरने लगती है।"[29]

पति के वियोग में वह दम तोड़ देती है। स्त्री की इच्छा, उसकी खुशहाली पारिवारिक घमण्ड के कारण, पुरुषवादी सोच के कारण समाप्त हो जाती है। लेखिका ने इस कहानी के माध्यम से रूढ़िवादी सोच, परंपरा एवं खानदान की खोखली मर्यादा के कारण टूटते रिश्तों की बनावट के प्रति संवेदना दिखाती नजर आती हैं । उनके पात्र भले ही समस्या से जूझते हुए दम तोड़ दें किन्तु संबंध विच्छेद की बात नही करते। कभी-कभी परिवार एवं समाज के सामने उनकी स्त्री पात्र अपने पक्ष में न्याय हेतु गंभीर प्रश्नों के साथ मुखर हो उठती है।

संगसार कहानी संग्रह में स्त्री संवेदना

यह नासिरा शर्मा का दूसरा कहानी संग्रह है। इसमें कुल 18 'कहानियाँ' संकलित हैं। इसका प्रकाशन वर्ष ई.सन 1993 है। इस कहानी संग्रह की ज्यादातर कहानियाँ बदनसीब शहीदों के पंचनामे है जिन्होंनें अपने मातृभूमि को अपने मजबूत कंधो से रक्षित करने का सफल प्रयास किया है। इस संग्रह की कहानियाँ इंसानों की अभिलाषाओं, इच्छाओं और सपनों की दस्तावेज मात्र हैं, किसी धर्म, विचार, जब की अच्छाई, बुराई को बताने का रोजनामचा नही। ईरान के धरती की राजनैतिक, सामाजिक एवं मानवीक घटनाओं से उठी असहिष्णुता की भावना ने लेखिका को वहाँ की यथार्थ घटना को बीच कहानियों में बाँधने पर मजबूर किया। वे कहती हैं-

"ये कहानियाँ ईरान की उन सारी जगहों को, जहाँ इनसानी खून की बूँदे धरती की प्यास बनकर उमर खय्याम की रुबाइयों के दर्शन में ढ़लीं कि यह मिट्टी बुजुर्गों,

पूर्वजों के वजूद से लबरेज़ हमसे हर शै में हम-कलाम होती हैं। खामोश संवाद का एक न समाप्त होनेवाला सिलसिला बनाती हैं; वहीं पर एक जिम्मेदारी का अहसास भी उस धरती पर साँस लेने वाले जिन्दा लोगों के सामने रखती हैं कि क्या इंसानों के बीच संवाद स्थापित करने का सेतु केवल राजनीति जैसा संकिर्ण माध्यम है, या मानवीय परम्पराएँ हैं ? दायरों धर्मो, विचारों और मठों में बंट जाना ही जीवन का लक्ष्य है, या फिर मानव जाति के लिए कुछ करना और उसे एकता में बाँधकर समस्याओं को सुलझाना बेहतर है ?"[30]

स्त्री संवेदना की दृष्टि से देखा जाय तो इस संग्रह में चार कहानियाँ ऐसी हैं जिनमें नारी संवेदना के विविध आयामों का उद्‌घाटन हुआ हैं। लेखिका इस संग्रह की कहानियों के नारी संदर्भ में संग्रह के दो शब्द में लिखती हैं- "ये रचनाएँ उसी अधूरे कशमकश की सनद है, जो मानवीय संघर्ष के सफर में मील का पत्थर साबित होकर आधारशिला की मजबूती की सूचना देती हैं कि आने वाली नस्लें इन बीहड़ रास्तों को सुगम बनाने में लगातार शामिल होती रहें: आखिर मुक्ति का रास्ता इतना आसान नही जो कम्प्यूटर की रिजल्ट की तरह पल-भर में हाथ लग जाय, बल्कि नस्लों को इस आतशकदे में होम होना पड़ता है। "31

यह होम होने की कशमकश ही, नारी चेतना को जागृत करने की सामग्री है। मुक्ति का पथ इतना आसान नही है उसके लिए आवाज बुलंद करनी पड़ती है। स्त्री संवेदना से संबंधित चारों कहानियों में लेखिका ने अपने पात्रो को हाजिर जबाब बनाया है। इस संग्रह की कहानियाँ अन्य और तंतुओं को अपने कैनवास में समेटे हुए हैं, जिसका बयान लेखिका खुद करते हुए कहती है-"उस समय ईरान अपनी निष्ठा एवं बलिदान की पराकाष्ठा पर पहुँचा हुआ था मगर वह जज्बा' सामूहिक प्रयत्न का न होकर अपनी-अपनी सीमा तक बंधा हुआ था। जिसने अपनों से मोहब्बत करने के बजाय नफरत करना सिखाया ।"[32]

नासिरा शर्मा आगे कहती हैं- "कोई भी धर्म या व्यवस्था तभी नकारी जाती है जब उसमें तानाशाही किसी भी रूप में मौजूद हो और इंसानों से उनके जीने के सारे सहज अधिकार और बुनियादी सुविधाएँ छीन ली जाएँ।"[33] बुनियादी आवश्यकताएँ एवं सुविधाएँ आज एक स्त्री के लिए कपडा, रोटी और मकान ही नही है, बल्कि उनके निर्णय, विचार, यौन स्वतंत्रा आर्थिक स्वतंत्रता, शिक्षा की स्वतंत्रता, वैवाहिक संबंध बनाने एवं नकारने जैसे मुद्दों पर उनका अपना पूर्ण अधिकार होना बुनियादी रूप से आज के समय में आंका जाता है। जहाँ ऐसी स्वतंत्रता नही मिलती वहीं नारी संवेदना आहत होती है कारण कि पुरुष को ये सभी अधिकार प्राप्त हैं। इन्ही अधिकारों की खोज करती नासिरा शर्मा की कुछ कहानियाँ इस संग्रह (संगसार) में उपस्थित हैं जो निम्नवत है।

दरवाज़-ए-कजविन

दरवाज-ए-कजविन का हिन्दी अर्थ 'वेश्यालय' होता है। संगसार-संग्रह की यह तीसरी कहानी है। इस कहानी में लेखिका कुशल गृहस्थी से परिपूर्ण परिवार की युवती 'मरियम' के जीवन को केन्द्र में रखकर इसका ताना-बाना बुनी है। यहाँ पर मरियम' पुरुष के छलावा का शिकार होती है और हंसती खेलती जिन्दगी का सफर परिवार से दरवाज-ए-कजविन (वेश्यालय) तक पहुँच जाती है। कथा नायिका 'मरियम' और' माजिद 'बचपन से दोस्त होते हैं। उनकी दोस्ती को देखकर घरवाले दोनों की मंगनी करा देते हैं। 'बारहवी' पास होने के बाद दो वर्ष की ट्रेनिंग के लिए गाँव जाना जरूरी था, उसके बाद शादी की बात पक्की थी। लेकिन एक साल बाद ही घरवालों के जोर देने पर उनका निकाह हो जाता है, मगर विदाई नही हुई थी। इस बीच कई बार 'माजिद' 'मरियम' से मिलने आता है। मना करने पर अपने रूप और भावी पत्नी की बात करके 'मरियम' के साथ रहता है।

"शादी के बाद सुबह विस्तर से उठाया कमाल साफ था माँ के साथ अन्य औरतों की आखें फट गई थीं। हँसी-मजाक का माहौल रोने-पीटने और बैन करने में बदल जाता है। सबके मन में संदेह उभरा, बहू कुवाँरी नहीं थी। क्रोध की लहर फैल गई। रो-रोकर रस्म के मुताबिक औरतों को इकट्ठा करना था कि बहू पाक-पवित्र न थी। सो वह ऊपर छत पर जाकर खड़ी हो सीना कूटने व बैन करने लगी।"[34]

'मरियम' के पास सफाई देने को बहुत कुछ था किन्तु उससे जब कोई पूँछे तब ना, उसे अपने ऊपर क्रोध आने लगता है। बदनामी का डर माता-पिता की बदनामी को सोचकर वह अन्दर ही अन्दर कुढ़ रही थी। ऊपर से माजिद का यह बदला हुआ रूप उसे दिमागी रूप से झिंझोड़ दिया था। उसको पश्चाताप होने लगता है कि उसने अपना कौमार्य क्यों भंग किया। लाख 'माजिद' उसका पति होने वाला था मगर हुआ तो नहीं था। मरियम के कौमार्य को भंग उसका ही पति किया था इसलिए वह उससे विनती करते हुए कहती है - "जाओ कुछ करो न, बहरहाल मै तुम्हारी पत्नी हूँ। मेरी सुरक्षा की जिम्मेदारी तुम पर है। उठो, उठो न ।"[35]

कापुरुष स्वभाव का माजिद अपने जगह से एक इंच भी नही हिलता । भय से उसका चेहरा पीला पड़ जाता है। मरियम अत्याधिक संवेदनशील हो उठती है। वह गिड़गिड़ाते हुए लहजे में अपने पवित्र होने का प्रमाण अपने प्रेमी, पति से कहलवाना चाहती है। किन्तु राजकिल्विषी, माजिद मर्यादा के डर से उदासीन लेटा ही रहता है। कलंक एवं गलत दोषारोपण से आहत 'मरियम' 'कहती है- "उठो, जाकर कहो न कि आखिर निकाह तो हो ही गया था, धार्मिक रूप से तुम मेरे पति और मै तुम्हारी पत्नी भी न.. उठो, खुदाया भो, मेरा दम घुट रहा है। मामा-बाबा खुदकुशी न कर लें मै तुम्हारे पैर पड़ती है। यूँ तुम मर्द हो, जबान खोल सकते हो..यूँ मुझे रुस्वा न करो...उठ जाओ - उठो मरियम ने उसका हाथ खींचा।"[36]

माजिद ने हाथ झटका और फुसलाकर कहा- "जो हुआ सो हुआ, गई इज्जत लौटकर नहीं आती हैं फिर भली लड़कियाँ क्या यूँ अपना अछुतापन खत्म कर देती हैं? गलती तो तुम्हारी भी.....मुझे रोक सकती थी। सही कहा है किसी ने जर, ज़मीन और जोरु झगड़े की जड़ें होती हैं। "[37]

माजिद का यह रूप देखकर मरियम बुरी तरह टूट जाती है। संवेदनशील नायिका के लिए उसका ससुराल और मायका अर्थहीन हो जाता है। वह किसको क्या सफाई दे। ससुराल में छल पर बैन जारी था, माजिद उदासीन था, और मायके किस मुँह से जाए। निरापनाध होते हुए भी वह अपरा थी। सामने क्या था ? कुछ भी न था। जो सबकुछ था (माजिद) वह सबसे पराया और बेईमान निकला ।

रूढ़िवादी मानसिकता एवं पति की बेईमानी ने मरियम को दरवाज-ए-कजविन तक पहुँचा देता है। वहाँ वह बिल्कुल उदास एवं निराश रहती है। एक दिन एक नौजवान आता है और मरियम से ढेर सारी बातें करता है। उस अजनबी की शक्ल एवं शराफत मरियम के दिलो-दिमाग में बस जाती है। काफी दिनों बाद फिर उस अजनबी से उसको मिलने का मौका मिलता है। वह 'मरियम' को कुछ किताबें देता है और कहता है इसे पढ़ना जहाँ न समझ में आए मुझसे पूँछ लेना। शायद वह उस आन्दोलन से मरियम को सावधान करना चाहता था कि जल्द ही ईरान के सभी वेश्यालय उजाड़ दिए जाएंगें और सभी लड़की का लड़कियों को गोली मार दी जाएगी। मरियम की दिलचस्पी इन बातों में उस समय ज्यादा नही थी वह तो उसका परिचय जानना चाहती थी कि यह कौन शरीफ जादा है जो इस दलदल में आता है और बिना किसी उद्देश्य की पूर्ति किये वापस चला जाता है। एक दिन वह, उस अजनबी से पूँछ बैठी । तुम्हारा नाम क्या है?' दोस्त का हवाला देकर वह हँसता है और उसके आगोश में समा जाता है- "सुबह जब वह उठी तो पहलू में उसका गरम बदन न था। एक अनजाने दर्द ने उसे झिंझोड़ दिया। कान में बैन की तेज ध्वनि उभरी-सारा नशा, सारा

इश्क पल-भर में ही समाप्त हो गया। रेशमी चादर को उसने सिर तक खींच लिया। वह उसके सोने के बाद जाने कब चला गया था। काफी देर तक वे बातें करते रहे थे।"[38]

स्वप्न में ही मरियम को दोनों घटनाएँ याद आने लगीं कितना विचित्र यह दृश्य है। एक तरफ माजिद का चेहरा याद आया और उसके कहे हुए वाक्य याद आए - "वह गुनाह था माँ की नजरों में। धर्म और समाज की दृष्टि से । अब मैं किस मुँह से जाकर सफाई दूँ ?"[39]

"उसी मुँह से जिस मुँह से मेरे साथ जीवन-भर निभाने का वचन लिया था, मरियम की आवाज आक्रोश से काँप रही थी । कैसा छलावा था यह माजिद ? बचपन में गंदे नमक के ढेलों को मैं नल की धार के नीचे धोते के प्रयत्न में सारा नमक कितनी बार घुला डाला था। आज वैसा ही अद्‌भुत आश्चर्य लग रहा था कि यह..... यह क्या हुआ ? सामने उसका भविष्य था। उसे क्या पता था कि पड़ोस में रहने वाला वह शैतान लड़का माजिद आज भी खेल में बेईमानी कर बैठेगा।" (40)

मरियम की आँख खुली तो वह अजनबी जा चुका था मारी कैफियत टूट चुकी थी। वह अपने जीवन की इन दोनो घटनाओंकी तुलना करते हुए सोचती है - मरियम के दिल में कुछ टूटा एक कसक-सी उठी । यहाँ रुमाल का मुआयना नही हुआ ! अजीब है यह दुनियाँ भी । ईमानदारी पर शक करती है और बेईमानी को जी भरकर जीती है।

लेखिका नासिरा शर्मा इस कहानी की स्त्री पात्र मरियम को अत्यधिक संवेदनशील एवं अन्तर्मुखी पात्र के रूप में चित्रित किया है। मरियम अपनी मर्यादा से ज्यादा अपने मामा- बाबा के जीवन में छाये संकट के बादलों के ऊपर ध्यान देती है। वह इतनी स्वाभिमानी है कि अपने पति के अलावा किसी को सकाई देने स्वयं नही जाती है। भले ही संघर्षो भरा जीवन चुनना पड़े। कहानी दरवाज-ए-उजविन स्त्री

संवेदना से लबरेज है। इसमें सर्वत्र नारी संवेदना एवं सिकन के तत्व दिखाई पड़ते हैं। जो अपने मुक्ति के लिए प्रयासरत हैं।

गूंचा दहन-

'गुंचा दहन' कहानी एक ऐसी मासूम लड़की की दर्द भरी दास्तान है जो मानसिक रोग से ग्रसित किन्तु अबोध और पाक है। लेखिका ने बारह-तेरह वर्षीय लड़की 'मेहरमाह' के साथ हुए अत्याचार को दर्शाया है। मेहरगाह ईरान की रहने वाली है। इस कहानी की विषयवस्तु ईरान के क्रान्ति और उसके बदलाव के कारण उठे जुलूसों और आन्दोलनों से नाराज पासदारों के क्रूरतापूर्ण व्यवहार से संदर्भित है। मेहरमाह (परवीन एतेमासी) स्कूल में पढ़ती है। वह अपने दादी, पिता और माँ के साथ में रहती है। मेहरमाह की दादी उसकी अम्मी को पसंद नही करती थी कारण कि वे अपने बेटे अमजद की शादी अपनी विधवा बहन की बेटी 'जरनिगार से करना चाहती थीं। अमज नौकरी के सिलसिले में 'इस्काहान' नामक जगह पर जाता हैं जो प्रसिद्ध प्राचीन ईरानी चित्रकार का सहकार जीता-जागता' उसे 'सुहेला' के रूप में प्राप्त होता है। वह उससे विवाह कर लेता है। इसलिए 'आगम जान, 'सुहेलो' को ज्यादा पसंद नहीं करती थीं। वह कहती थी- "होश में आओ बेटा। इस्काहान की औरतें चेहरे से जितनी सफेद चमड़ी की होती हैं, उससे ज्यादा उनका खून सफेद होता है। देखने में मिसरी की डली की तरह मीठी और ठोस, खानेवाले के मुँह में पानी भर आए, मगर किरदार ऐसा मलाई जैसा कि... पूछो मत जिससे चाहा उसके हाथों में लिपट गई ।"41

माँ की बड़ी आलोचना के बाद भी अमजद अपने जिद पर अड़े रहे। खाजम जान हमेशा इस्कान की औरतें : इस्कान की औरतें' कहकर 'सुलेहा' पर तंज कसती रहती थीं। एक दिन सुलेहा के अन्दर की औरत अपने स्वत्व की रक्षा हेतु अपने सास को फटकारती हुई कहती है- "खानम जान आप भी औरत हैं। फिर उस औरत जात की निंदा कैसी ? मशहद के मर्द क्या कम बुरे मशहूर हैं, मगर आपके घर में....१ उस

दिन से ही ताना कम होते-होते लगभग बंद ही हो गया था। अमजद आगा के पिता 'मशहद' शहर में दस पुश्तों से रहते आए थे।"[42]

इस कहानी के प्रारंभ में लेखिका ने सास-बहू के बीच उपजे मन-मुटाव के कारण दोनो की अलग - अलग संवेदनाओं को अलग-अलग प्रयोजनों के कारण संघर्ष करते प्रस्तुत किया है। जब औरत खुलकर अपना पक्ष रखती है तो तत्काल समस्या का समाधान हो जाता है।

कहानी का मध्य एवं अन्त बेटी के दर्दनाक मौत और उसके प्रति उत्पन्न लगाव से जुड़ा हुआ है। सुलेहा की बेटी 'मेहरमाह' 12 वर्ष की थी वह 'परबीन एतेमासी स्कूल' में पढ़ती थी। ईरान के बिगड़ते हालात को देखते हुए अमजद मियाँ बेटी की शादी जल्द ही करना चाहते हैं किन्तु सुलेहा 20वर्ष के पहले मेहरमाह के विवाह के पक्ष में नहीं थी किन्तु "मेहर माह के लिए पैगाम-पर-पैगाम आ रहे थे सुलेहा खानम बताते-बताते तंग आा चुकी थीं कि मेहरमाह सिर्फ बारह साल दो माह नौ दिन की है। मेहरमाह बारह की है और वे स्वयं अटठाईस वर्ष की उनकी उम्र की लड़कियाँ तो आज भी पढ़ रही हैं। नज़मा और शीरीनी पी-एच.डी. कर रही हैं जबकि वे एक जवान लड़की की माँ बन चुकी हैं। ठीक है उनका विवाह पंद्रह वर्ष की उम्र में हो गया था, मगर इसका यह अर्थ नही कि खानदानी रिवायत बन जाए ? बीस से पहले वे मेहरमाह को ब्याहने से रहीं ।"[43]

आधुनिक नारियाँ जिनको किसी भी वजह से अपने जीवन में कुछ बड़ा करने को नहीं मिलता वह अपने बच्चों के भविष्य को लेकर कुछ ज्यादा संवेदनशील हो जाती है। ईरान के हालात इतने खराब थे फिर भी माँ अपने बेटी के उज्ज्वल भविष्य के प्रति काफी संवेदनशील है । वह इस उहापोह में है कि - "क्या किया जाय ? स्कूल खत्म कर लेगी इस साल ? कॉलेज में अगले साल दाखिल होगी। चार साल बाद इंटर करके कॉलेज, उसके बाद क्या युनिवर्सिटी जाएगी ? तीन वर्ष से तेहरान यूनिवर्सिटी

बंद है। फिक्र की क्या बात है। चार साल तक यह हालात बरकरार थोड़े ही रहेंगी ? शादी कर दी मेहरमाह की तो जाने कितने अरमान कुम्हला जाएँगे। शायद आगे पढ़ भी न सके। लड़का कितना भी ठोक-बजाकर ढूँढो, मगर होगा तो वह भी आदम की औलाद कमजोरियों का पुलिंदा । अमजद का कहना ठीक है, मगर वह फरिश्ता मुझे मिलेगा कहाँ जो मेरी बेटी को आराम से रख सके ।"[44]

एक दिन अचानक परवीन एतेमासी स्कूल' की प्राचार्या ने लड़कियों का एक जुलूस निकाला। जुलूस से खफा पासदारों ने लगभग एक हजार लड़कियों को पूँछताछ के लिए ले गये थे। किन्तु उसमें से ज्यादातर लड़कियों के ऊपर संगीन अपराध लगाकर उनको जेल में डाल दिया गया था। उन्ही में से एक नाम मेहरमाह का भी था। पुत्री के वियोग में सुलेहा और अमजद मियाँ हप्ते, महीना, साल, तक इन्तजार करते रहे। इस कोर्ट से उस कोर्ट का चक्कर लगाते रहे किन्तु उनको न्याय नही मिला। एक दिन खबर आती है कि मेहरमाह की 'गुंचा दहन' के कारण अर्थात जेल में बलात्कार के कारण मौत हो गई। सुलेहा खानम बेहोश होकर गिर जाती हैं और अमजद मियां से कहती हैं, तुम्हारा खुदा कहाँ है ? उसे पुकारो कहो कि मेरी लड़की वापस कर दे। वह आगे बिना डरे पासदारों से कहती हैं-"ये आ गये धर्म के पहरेदार ! पूछों इनसे किस दीन-धर्म ने कहा है कि कली की तरह नाजुक अंगवाली लड़कियों को हलाल कर दो अपनी हवस की छूरी से ।"[45]

इस कहानी में एक माँ की पुत्री के प्रति अति संवेदनशील का वर्णन हुआ है। लेखिका एक माँ के रूप में समाज एवं धर्म के ठीकेदारों के सामने प्रश्न करती है कि क्या मासूमों को अपने हवस का शिकार बनाने में तुम्हे थोड़ी भी शर्म नहीं आती ? क्या नाबालिक लड़की का गुंचादहन होना चाहिए ?

संगसार-

'संगसार' का अर्थ गुनहगार को बाँधकर पत्थरों से तब-तक मारा जाय जब-तक उसकी मौत न हो जाय। 'संगसार' कहानी संग्रह की यह शीर्ष कहानी है। स्त्री जीवन का बड़ा मनोवैज्ञानिक विश्लेषण इस कहानी में हुआ है। कहानी का प्रारंभ भारत के तन और मन में उठे अहसासों के असंख्य कामनाओं से होता है। 'कहानी नायिका 'आसिया'- "आहिस्ता-आहिस्ता कदम उठाती आगे बढ़ी, लगा जैसे बदन के सारे जोड़ जंजीरें तोड़, ठुमक रहे हों और रोएँ-रोएँ से उमंगों का सोता फूट रहा हो। बदन इतना हलका जैसे बुनी हुई रूई का गोला। सामने आईने में नजर आते सरापे पर उसने नजर डाली। एक निखार, एक सम्मोहन, एक हुस्न, एक लावण्य उसके पूरे वजूद को दमका रहा था। कोई जलन, कोई जख्म, कोई दाग, किसी तरह का कोई स्याह निशान कहीं मौजूद नहीं था बल्कि बदन पर फिसलते हाथों ने अहसास दिलाया जैसे वह फूल की तरह मुलायम और खुशबूदार है। "[46]

कहानी में स्त्री संवेदना दो अलग-अलग आयामों में चित्रित हुआ है। एक तरफ मर्यादा की चादर ओढ़े आसिया की माँ, बहन, और मौसी हैं जो आसिया को संतोष, संस्कार का पाठ पठाकर उसकी बुद्धि को अपने घर, संसार की तरफ मोड़ना चाहती हैं, तो दूसरी तरफ आसिया है जो, संसार की सारी वस्तुओं को छोड़कर भी उस सुख, सुकून एवं चैन को अपने में समेट लेना चाहती है। उस अजनबी से प्रतिदिन आसिया का मिलना उसकी माँ को खलता रहता है। वह कहती हैं- "दोजख की आग खरीद रही हो तुम ?"[47]

कई दिनो तक आसिया घर से नही निकली किन्तु चौथे दिन नहा-धोकर तैयार हुई और अपनी माँ को इस प्रकार निहारा मानो कह रही हो - "दोजख की आग में जीते-जी झुलस चुकी हूँ मुझसे मेरी जन्नत मत छीनों । सबकी निगाह में यह पाप ही

सही, मगर कर लेने दो मुझे यह गुनाह, 'यह मेरे अनुभव की उपलब्धि है, इस पर किसी का अधिकार नही ।"[48]

लेखिका इस कहानी में चार स्त्रियों के मध्य संवाद स्थापित कर आपसी मत वैभिनता से इस तथ्य को उजागर करने की कोशिश की हैं फिर क्या बच्चा पैदा करना पति के सुख को पूर्ण प्राप्त करना हुआ ? क्या शराफत जीवन का मूल लक्ष्य है। क्या जो अनुभव एक स्त्री ग्रहण कर चुकी है वही किसी दूसरी पर लागू करना तर्कसंगत है ? इन प्रश्नों को संवेदना के माध्यम से समाज के सामने उठाया गया है।

आसिया अपने पूरक को लेकर इतनी संवेदनशील और जज्बाती है कि वह बड़ी बहन से ही सवाल कर बैठती है "सच बताना क्या वह सब तुम्हें अपने शौहर से मिला जिसकी तमन्ना एक औरत के दिल में रहती है या सिर्फ हर साल एक अदद औलाद का तोहफा मिलता रहा?"[50]

"हाँ मिला बहुत कुछ, घर-बार और ये औलादें, ऊपर आसमान से तो नहीं गिरीं न ?"[51]

आसिया आगे कहती है-

"झूठ.... यही झूठ हमारा जेवर है... यह जेवर मैंने भी पहना, यह नकाब मैने भी आँखों पर डाली, मगर जानती हो मेरे भाग्य में कुछ और बदा था। मुझे मेरा हिस्सा मिला जरूर, मगर उसने मेरा सब कुछ बदल डाला ।"52 आसिया का बदला रूप उसके बहन के दिल में डर, चिन्ता और दुःख जैसे मनोभावों का संचार करने लगा। आसमा अपनी छोटी बहन से पूँछती है। "अफजल शौहर तो अच्छा है न ? "हाँ, शरीफ सीधे और कमाने वाले....हर औरत के लिए सिर्फ ये खूबियाँ काफ़ी नहीं होतीं ।"[53]

यानी ? प्रश्नवाचक मुद्रा में एक परंपरागत स्त्री 'आसमा' बोली- कथा नायिका उसी रौब में मन की गुत्थियों को खोलती रही-

"शराफत भूखे को खाना, प्यासे को पानी, मरते हुए को जिन्दगी नहीं बख्शती। इन चीजों के लिए शराफत से और ऊँचा उठना पड़ता हैं समझी। और अब भी औरत होकर न समझ पाई हो तो।"[54]

अपनी देह और आत्मा की पूर्ण मुक्ति को लेकर स्त्री इतनी संवेदनशीलत पहले अन्य कहानियों में कम ही देखने को मिलती है। 'आसमा' की माँ तजुर्बेदार स्त्री हैं उनको समाज और लोक का लम्बा अनुभव है अत: बेटी को समझाने की कई बार असफल प्रयास कर चुकी थीं। पचास वर्ष के अनुभव से वह कहती है- "वह तजुर्बे कर रही है। यहाँ सदियों से जो तजुर्बा हम कर रहे हैं वह तो उसकी नजर में फिजूल और बोसीदा बात है। वह अकेली समाज को बदल डालेगी, मर्दों की बराबरी कर उनसे नया कानून लिखवा लेगी।"[55]

परिवार के सभी लोग मौसी, आसमा और आलिया की माँ बेटी के इस बदले स्वरूप से चिन्तित हैं। उसका क्या अंजाम होगा ? आखिर ससुराल में पता चल जाय तो कितनी बदनामी होगी ? संतोष, नैतिकता, और नसीब की बड़ी-बड़ी दलीलें दी गई किन्तु स्त्री जब अपने कानून पर उतर आती है तो ये सारी दलीलें खिड़की से बाहर का रास्ता नाप लेती है। वह कहती है- "भूल मत करना की मुझे अपना अंजाम पता नहीं, मगर मोहब्बत को लौटाने का दम मुझमें नहीं था। इस तन को सुलाना अब मेरे बस की बात नही है।"[56]

आखिर समझाने का असर आसिया पर इतना जरूर हुआ कि वह आत्म मंथन करने लगी। बहन अपने ससुराल एवं मौसी अपने घर जा चुकी थी। आसिया घर से बाहर निकलना बंद कर देती है। वह शादी का एल्बम खोलती है और अपने शादी के बीते लम्हों में खो जाती है।

माँ को भी संतोष हो जाता है कि समझाने का लगता है कुछ असर जरूर पड़ा है। वह 'आसमा' को यह समाचार देती है। कथा नायिका सोचती है कि, कितना फर्क

होता है दो पुरुषों में भी ? अफजल मियाँ को महंगे तोहफे देने का बहुत शौक था और उसको प्रेम करने का। इसी ख्वाब में वह लिफ़ाफे वापस आलमारी में रखी। अनेको सवाल उसके समक्ष प्रस्तुत होकर जवाब तलब कर रहे थे। "ये जन्नत की शादियाँ होश आने पर जवानी का रोग क्यों बन जाती हैं ? शौहर से तन और मन का मिलना बहुत जरूरी होता है ? जिससे तन, मन और मस्तिष्क सब मिल जाय वह शौहर नहीं होता है, फिर वह क्या होता है? - दुनिया की नजर में सिर्फ गुनाह ? गुनाह आखिर इतना खूबसूरत, इतना लबरेज, इतना लतीफ क्यों होता है ? गुनाह में इतनी ताकत कहाँ से आ जाती है कि वह शबाब को छोटा कर समाज और कानून को चुनौती देने लगता है। "57

आखिरकार एक दिन अफजल, उसकी माँ और पिता जी आसिया के घर आए और अपनी बहू को विदा करा ले गये। कुछ दिन अच्छे गुजरने के बाद आसिया को अपना प्रेमी याद आने लगा। अफजल का स्पर्श उसे बेमानी लगता। उसके शरीर और मन में पश्चाताप की भावना जागृत होती। उसकी मांसपेशियाँ इस तरह से तन जाती कि वह अफजल को नीचे धकेलने की कोशिश करने लगती। एक खौलता आक्रोश इस प्रकार हावी होने लगता जैसे कोई जबरदस्ती अपनी हदें पार कर रहा हो।

अपने तन पर काबू पाते, अपनी इच्छाओं का गला घोंटतें और अपने ऊपर अत्याचार करते-करते आखिर वह हार गई। वह अपने पर काबू पाना चाहती है। खुद की पहचान करते हुए वह समझने की कोशिश करती कि "कहीं दो जगह बटी जिन्दगी उसे समझा तो नही रही है कि दुनिया की जिन्दगी से हटकर एक रुहानी जिन्दगी भी होती है और इन दोनों के बीच तालमेल बिठाकर, अपनी पहली जिन्दगी का विस्तार मानकर दूसरी जिन्दगी को जीना होगा। एक का संबंध समाज से होगा दूसरे का उसके निज से...।"[58]

हर एक मोड़ पर प्रत्येक पैराग्राफ पर नारी संवेदना की, उसके चेतना के इतने अंतरंग दृश्य और द्वंद्व इस कहानी में छिपे हैं, कि किसी भी पाठक को न्याय कर पाना काफी कठिन होगा कि कौन सही मार्ग पर है, कौन कुमार्ग पर। अपने-अपने जगह कहानी के सभी चरित्र अपना सौ परसेन्ट अपने कर्म और धर्म को सौंप रहे हैं फिर भी इतना तनाव, इतनी संवेदनशीलता किस बात का है ? आसिया अपनी दूसरी जिन्दगी की कथा साफ-साफ अफजल को बताना चाहती है मगर सुबह उठते ही उसे दूसरी फिक्र लग गई- "दुनिया क्या कहेगी ? उसे बुरी औरत नाम देगी, मगर उसने तो कभी अपने को अच्छी औरत कहलाने का सपना नही देखा सच्ची, ईमानदार, जरूरत की बात करना बेईमानी है क्या ?- अच्छी औरत के परदे में वह दोहरी जिन्दगी कब तक जिएगी ? वह ख़राब औरत है, हाँ वह बदकार और आवारा औरत है।"[59]

काल एवं परिस्थिति की भयानकता को देखते हुए आसिया यह निर्णय लेती है कि अभी अफजल छः महीने के लिए विदेश जा रहा है जब वह वापस लौटेगा तब सोचा जाएगा। तब-तक तीनो को समझने और कसौटी पर कसने का समय मिल जाएगा। अफजल विदेश जाता है और कुछ दिन बाद उस अजनबी का फोन आता है। आसिया उससे मिलने चली जाती है और पुलिस द्वारा होटल में पकड़ी जाती है। रिश्वत देकर उस मर्द को छोड़ दिया जाता है और औरत को संगसार की सजा सुनाकर जेल में डाल दिया जाता है। मायका, ससुराल शौहर सबके काफी दौड़-भाग के बावजूद कोर्ट ने अपना फैसला सुना दिया। शरीयत की सारी किताबें छान ली गई किन्तु संगसार का जिक्र कहीं नहीं था मगर कोर्ट ने अपनी जल्दबाजी में लिया फैसला वापस नही लिया क्योंकि उन्हें डर था कि इस तरह उनके हर हरकत पर सवाल उठेगें। उनकी सत्ता की बुनियाद खौफ और दहशत पर टिकी है वह खत्म हो जाएगी। इसलिए यह ऐलान किया गया कि मौका-ए-वारदात पर 'आसिया' को पकड़े जाने के कारण उसे कल संगसार कर दिया जाएगा।

आसिया समाज और धर्म की रुढ़िवादी एवं तानाशाही फैसले का शिकार होती है। मर्द को क्षमा और औरत को संगसार ! आखिर शरीयत के झूठे वायदों पर एक धर्म विशेष कब तक अपना अत्याचारी रवैया कायम रखेगा ?" बंद आखों के सामने उसका चेहरा उभरा, आसिया के पपड़ी पड़े होंठों पर मुस्कान छोड़ गई। फिर 'आसमा' की आँसू-भरी आंखे, माँ का छाती पीटते हुए बैन करना, सास-ससुर का बेकरारी से रोना, अफजल का हैरत से उसे ताकना, बचपन, जवानी सारी जिन्दगी रील की तरह खुलकर सामने आ खड़ी हुई ।"[60]

सजा के वक्त आसिया से उसकी कोई आखिरी ख्वाहिश ? पूँछा गया- सुनकर हँस पड़ी वह और हँसती गई - "जब जीना चाहती थी तब सबने तन पर सौ-सौ पहरें लगाए, किसी ने पूँछा कि औरत तेरी ख्वाहिश क्या है ? और आज जब मौत सिरहाने खड़ी है तो उससे पूछा जा रहा है कि बता तेरी आखिरी तमन्ना क्या है ?"61

सवाल फिर से दुहराया गया। आखिरी इच्छा, किसी को देखना, मिलना, कुछ कहना जो चाहो बिना झिझक कहो।

"हाँ।" एकाएक हँसते हुए वह रुक गई। चेहरे पर गंभीरता फैल गई। आँखों में जिन्दगी की चमक लौट आई, सलाखों पर उसकी मुट्ठी ढीली पड़ गई और आरजू की गहरी धुंधलाहट में दिल की आवाज, आखिरी ख्वाहिश में महक उठी। वह अचकचाकर बोल उठी- "मेरी जन्नत, एक पल के लिए ही मुझे वापस दे दो ।"[62]

आसिया को संगसार कर दिया जाता है किन्तु वह दोषी है तो फिर उस रात औरतों ने अपने घर के चूल्हे क्यो नहीं जलाए ? मर्दों नें खाना क्यों नहीं खाया? यदि आमिया गुनहगार थी तो फिर उसके संगसार होने पर यह दर्द, यह कसक?

लेखिका इस कहानी में इन बंद प्रश्नों को छोड़कर कहानी समाप्त करती हैं किन्तु समाज में छाई दर्दी और मुँह छिपाने की कोशिशों से साफ पता चलता है कि रूढ़िवादी मान्यताएँ भाती किसी को भी नही, किन्तु उन्हें तोड़ने का हौसला 'आसिया'

जैसे शूरवीरों में ही होता है। जो जितना 'स्व' के लिए संवेदनशील होगा वह उतना सामाजिक समस्याओं को चुनौती देने में सक्षम होगा। आसिया शेर की पूँछ बनने से बेहतर बिल्ली का सिर बनना पसंद करती है। इस प्रकार संगसार कहानी मे स्त्री संवेदना अपने समस्त अंगों और उपांगों के साथ प्रकट हुआ है जिसका यथार्थ वर्णन यहाँ प्रस्तुत हुआ।

आखिरी पहर-

यह कहानी स्त्री संघर्ष की यात्रा का वह पड़ाव है, जहाँ उसे विश्राम, जीवन के किसी मोड़ पर नही मिलता है। ईरानी क्रान्ति एवं तख्तापटल की राजनीति में आनंद सिर्फ नेताओं को प्राप्त होता है। सारे जहाँ का दर्द और छटपटाहट आम-जन की तकदीर होती है तिस पर भी घुटन, अकेलापन और मानव के रूप में छिपे भेड़ियों से खतरे का शिकार नारी जाति होती है जो आन्दोलन या किसी अन्य कारण से अपने परिवार को खो देती है।

"कहानी का प्रस्थानबिन्दु बाल-विधवा 'जाहेदा' और उसकी सास के वार्तालाप से प्रारंभ होता है। उस समय 'जाहेदा दस साल और 'रजब' बारह साल का था जब दोनों की शादी हुई थी, जीवन के पाँच वर्ष रजब के साथ जाहेदा के बीते थे तभी साँप के काटने से उसकी मौत हो गई। जाहेदा को आज रजब की बहुत याद आ रही थी वह अपने सास से कहती हैं- "पूरे पाँच माह गुजर गए हैं; जब मेरे पेट में पाँच माह का बच्चा होगा और नौ महीने बाद एक छोटा सा बछड़ा अपनी चितकबरी गाय की तरह मेरे पेट से बाहर आ जाएगा, मुलायम-मुलायम सा, राजब की तरह...।"[63]

प्रन्द्रह वर्ष का बाल-मन जो स्वयं एक बच्चा है, वह बालविवाह जैसी कुप्रथा के कारण इतनी कम उम्र में विधवा हो जाती है। निर्दोष स्वभाव एवं भोली-भाली इस बच्ची की बात सुनकर उसकी सास स्वयं निर्णय लेती है। वह विचार करती है कि

"पूरी जिन्दगी कैसे गुजारेगी ? किसी अच्छे लड़के के साथ इसके दो बोल पढ़वा देना मेरे लिए मुनासिब होगा, वरना मेरे मरने के बाद अकेली पड़ जाएगी ।"[64]

आजकल जहाँ शहरों में दकियानूसी खयाल पुराने दरख्त की तरह पाँव जमाए बैठे हैं वही इस छोटे से गाँव में जहाँ दूर दूर तक सिर्फ पहाड़ी ही दिखाई पड़ती है, कुवाँर मर्दों की जहाँ कमी है। ऐसी विकट परिस्थिति के बावजूद एक बूढ़ी औरत अपनी विधवा बहू के लिए एक स्कूल टीचर का हाँथ मांगती है।

जो अभी कुँवारा है। वह कहती है- "सुन, मेरी एक बहू है | मेरा बेटा मर गया। मैं चाहती हू, तू उससे निकाह कर ले। देखने सुनने में अच्छी है। देखना चाहो तो शाम को खाना मेरे घर खाओ । इस पहाड़ी के नीचे जो नन्हा सोता है, उसी के पासवाली झोपड़ी हमारी है। पूरी पाँच गाऐं और दस भेंडें हैं। हमें दहेज़ नही चाहिए। तुम परेशान मत होना।"[65]

'हसन' हैरत से उस औरत को देखने लगा। वह सोचता है की गाँव की औरतें इतनी मुँख और अपनी परेशानियों को इतनी मुस्तैदी से हल करती होंगी यह अविश्वनीय ही कहा जायेगा। अन्ततः 'हसन' और 'जावेदा' का विवाह हो जाता है। शादी के एक साल बाद ही 'हसन' गाँव वालो की समस्या को हल करने में इस कदर उलझा कि उसका रोष शाही हुकूमत के विरोध में पनपने लगा। समय का चक्र ऐसा चला कि हसन भूमिगत गतिविधियों में फँसता चला गया। शादी के दस सालं बीत गये किन्तु 'जावेदा' माँ नही बन सकी इसलिए हसन उसको शहर डाक्टर को दिखाने ले गया, वहीं सीमा सुरक्षा पुलिस ने उसे पकड़ लिया और साम्यवादी समझकर उसका इनकाउंटर कर दिया गया। जावेदा दोबारा विधवा हुई। उसके घर और जानवरों को आग के हवाले कर दिया गया । सास- बहू पैदल शहर में दर-दर की ठोखरे खाते भटकते रहे, उसी बीच एक दिन उसकी सास भी मर जाती है।

जब स्त्री परीक्षा देने लगती है, तो परिस्थितियाँ और ज्यादा समस्याएँ पैदा करती हैं। ऐसी समस्याओं से लड़ते-लड़ते तीस वर्ष की जाहेदा बदलते राजनीतिक दौर का शिकार हो जाती है। 'शाह' का दौर मतलब आरामदेह जीवन की शुरुआत और पेट्रोडालर की रेल-पेल; 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाली व्यवस्था में जाहेदा शरीफाना जीवन नहीं जी सकी उसको बलात् एक नौ-दौलतिये की रखैल बनना पड़ा। 'खलील' 'जाहेदा' पर पानी की तरह पैसा बहाता था किन्तु जाहेदा संवेदनात्मक एवं वैचारिक स्तर पर उससे जुड़ न सकी। वह पढ़ा-लिखा भी नही था इसलिए न बात करने की तमीज थी न औरत जात की इज्जत करने का सलीका। जाहेदा को उससे इतनी शदीद नफरत थी कि वह दो वर्ष साथ रहने के बाद भी उससे निकाह की बात नहीं कर सकी। जलील करने के सिवा इस तिरयाकी के पास कोई अन्य अभिव्यक्ति नहीं थी। इसी को वह प्यार कहता था। उसके चले जाने के बाद जाहेदा घण्टों इस शब्द पर अफसोस करती कि "आखिर ऐसे सुने-सुनाए शब्दों का प्रयोग वह क्यों करता है जो उसको इतना बदसूरत बना देते हैं कि इश्क से नफरत होने लगती है। और वह इस कैद से आजाद होने के लिए दिल-ही-दिल में अपनी मौत की दुआ माँगती।"[66]

दैवीय विधान कहो या राजनीतिक परिवर्तन किन्तु एक असहाय स्त्री के लिए यह दैवीय विधान की श्रेणी में ही गिना जाना चाहिए क्योंकि स्त्रियाँ राजनीति के शोषण का शिकार ज्यादा होती है, चाहे उसमें फँसकर या प्रेम से फुसलाकर। शाही तख़्ता पलट जाता है। इस्लामी झण्डा घर-घर लहराने लगता है। फाहैशा-खानों को आबाद करने और, शाही वफादारी करने में, तिरयाक का नशा खींचने वाले गोली से उड़ाए जा रहे थे। उनमें से एक नाम 'खलील' का भी था "जाहेदा ने सुख की साँस ली । पहले जी भरकर नहाई, फिर अच्छा लिबास पहना। हलका इन कानों के पास लगाया और नाक के नथुनों पर मला, फिर एक कमरे से दूसरे कमरे में बड़ी आजादी से घूमी | अपनी दौलत का अंदाजा लगाया और एक लम्बी सांस खींचकर उसने अपने-आप से

कहा- अब वह इज्जत से जी सकेगी। खुली हवाँ में सांस ले सकेगी। रोटी, कपड़ा और मकान की खातिर वह मर्द के साथ रहने पर मजबूर नहीं होगी ।"[67]

इंसानी रिश्ते एक औरत के लिए दो अलग किरदार निभाते हैं। जब रिश्ता पूर्णतः जिस्मानी हो तो वह खुद को मर्द के समक्ष खोल नहीं पाती उसकी बेकसी नफरत में बदल जाती है। लेकिन जब मर्द रुहानी और जिस्मानी दोनों में समभाव स्थापित कर औरत को छूता है तो वह स्वयं खुद को उसके सामने परोस देती है। जहाँ 'हसन' और 'रजब' जैसे पुरुष 'जाहेदा' को अपनी ओर आकर्षित करते हैं, वहीं खलील की मौत के बाद वह खुशी मनाती है।

"उसने बड़े शान से पर्स उठाया और बिना किसी खौफ के वह दो साल बाद बाहर निकली। उसकी आँखे सड़कर पर आमदरफ़्त, मर्द-औरत के चेहरों और शानदार दुकानों को देखकर चकाचौंध होने लगीं। इतनी भीड़ में उसे चलने की बिलकुल आदत नही थी। पिछले दो वर्षो से तो वह घर में कैद थी। उसके पैर थकने लगे। सामने चुलुक बाबी का रेस्त्रां देखकर वह उसमें दाखिल हुई और कुरसी से टेक लगाकर राहत की साँस ली। अरसे बाद भूख उसे तेजी से लगी, जैसे बचपन में लगती थी। उसने पेटभर खाना खाया। थोड़ी देर कुछ सोचती-सी अपनी मेज पर बैठी रही। उसको अपने में मगन बैठा देखकर चुलुकबाबी के मालिक ने गुलाबी छींट की चादर में अधखुले चेहरे को गौर से देखा ।"[68]

स्त्री संवेदना के इतने सफेद और गुलाबी रंग इस कहानी में भरे पड़े हैं कि अंदाजा लगाना कठिन हो जाता है कि मानव अपनी जिन्दगी जी रहा है या नियति उसके साथ खेल रही है। इसमें पूरा का पूरा हाथ नियति का ही नहीं है। औरत-मर्द की कुछ अपनी बुनियादी आवश्यकाताएँ भी है। जिसे पूरा करने के लिए वह इस पटरी से उस पटरी पर जम्प करता रहता है। इस बार नियति नहीं बल्कि बुनियादी जरूरत के खातिर 'जाहेदा' और' चुलुकबाबी के मालिक ('किश्तमंद') एक दूसरे से निकाह कर

लेते हैं। "जिन्दगी ने एक बार फिर नए मोड़ पर जाहेद को पुकारा था। इस बार जाहेद की इच्छा का भी दखल था। इसलिए वह किश्तमंद जैसे खुशशक्ल, अधेड़ मर्द की हाँ से इनकार न कर सकी।"[69]

किश्तमंद से निकाह होनें के बाद वह उसके दो बेटों की माँ भी बनना आसानी से स्वीकार कर लेती है। कारण की किश्तमंद जबान और कलाम में इतना माहिर था कि जाहेदा के वीरान पड़े अँधेरे जहन में जाने कितने चराग रोशन कर दिए थे। समय ने करवट बदली मौत, भय, निराशा, हताशा, जोश जंग, जलन जाने कैसे ? समय के बीतते दूध के उफान की तरह बैठने लगे। मुल्क का दरवाजा खुल गया। किश्तमंद के दो जवान बेटे घर वापस आ गये। माँ-बाप और बच्चों से हरा-भरा यह घर महकने लगा। अपनी किस्मत पर जाहेदा को खुद आश्चर्य होता। वह हमेशा भगवान से दुआ करती की अब हमारी झोली में जो खुशियाँ आपने बख्सी है उसे किसी की नजर ना लगे। दूध की जली बिल्ली छाछ को भी फुँककर पीती है। अत्याधिक संघर्ष के बाद जब व्यक्ति को खुशियाँ मिलती है तो साथ ही उसे खोने का डर भी अपने-आप आ जाता है। इसी रस्साकसी में जीवन के 10 वर्ष और बीत गए। घर में बहुओं के आने की तैयारी होने लगी । "जाहेदा अपने को हर दूसरी औरत की तरह खुशकिस्मत समझने लगी बदसूरती का गुजर उसके इस घर में नही था । जिन्दगी चलने का नाम है-इसका अहसास उसे अब हुआ। वह सब कुछ भूल गई है। सियासत ने फिरहाल अपनी तलवार म्यान में रख ली थी। जंग का खून धुल चुका था । 'घुटन की चादर फट चुकी थी। आबादी की तरावट अपने पूरे जोबन के साथ फलदार दरख्तों, फँसल तैयार-खेतों और चमकीले चेहरों से झांक रही थी ।"[70]

खुशहाली के माहौल में गदबदाती बेटों की जवानी और बहुओं के आगमन का इन्तजार एक स्त्री के मन को हर्षित कर दिया था किन्तु इस बार बारी नियति की थी। कुदरत ने ऐसा विकट रूप धारण किया कि सारी धरती काँप उठी इमारतें टहकर

मलबा बन गई। उसी मलबे के नीचे किश्तमंद, और उसके दोनो बेटे दबकर मर गये। साथ ही एक औरत की संवेदना और उसके सपने ढहकर चकनाचूर हो गये।

लेखिका ने जिन सफेद और गुलाबी रंगो के अदला-बदली से खुशी और गम का कलेवर तैयार कर इस कहानी का ताना-बाना गढ़ा था, वह कहानी के अन्त में धीरे-धीरे श्याह पड़ता गया। चाहे-अनचाहे 'जाहेदा' हर बार टूटी, जिन्दगी को फिर से जुड़ता देख जीवन जीने की दृढ इच्छाशक्ति बनाए रखी किन्तु इसबार जिंदगी ने उसे बहुत कुछ देकर सब कुछ छीन लिया,

इब्नेमरियम कहानी संग्रह में स्त्री संवेदना

'इब्नेंमरियम' नासिरा शर्मा के तेरह कहानियों का संग्रह है, जो प्रथम बार 1994 में प्रकाशित हुआ । इसकी प्रत्येक कहानी इन्सानी संघर्ष की दास्तान बयां करती है। भारत को लेकर सुदूर-युगाण्डा, फिलिस्तीन, इथोपिया, स्काटलैण्ड, इराक, टर्की इत्यादि देशों की भिन्न सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमियाँ हैं किन्तु संवेदना का धरातल एक ही हैं। इन्सानी संघर्ष, छटपटाहट, एक जैसी भूख, गरीबी बदहाली, सत्ता पक्ष की वर्चस्ववादी नीति आदि स्त्री संवेदना की दृष्टि से इसके अन्तर्गत कुछ कहानियाँ उल्लेखनीय है। किन्तु उससे पहले संग्रह पर लेखिका का क्या मन्तव्य है जान लेना आवश्यक है - "मेरे सोच के सिलसिले की भावनात्मक अभिव्यक्ति के रूप में मेरी ये कहानियाँ पाठकों को बुरी नही लगेंगी, बल्कि मेरा विश्वास है कि ये उन्हें संवेदना के धरातल पर अधिक अपनी सी लगेंगी ।"[71]

'इब्नेमरियम' कहानी संग्रह के मूल पृष्ठ पर लिखा गया है-

"नासिरा शर्मा रक्तसनी आकांक्षाओं की, नृशंस अत्याचारों की जघन्य अपराधों की कहानियाँ लिखती है । वह आदमी और आदमी के जीवन और जगत को, उसके सच को उकेरने के लिए निरंतर व्याकुल नजर आती हैं। तभी तो तमाम तरह की भयानकताओं, आतंकों और क्रूरताओं के बीच से प्रेम और आत्मीयता को ढूंढ निकालती

हैं। उन रिश्तों के सबसे बड़े यथार्थ को पा लेती हैं, जिसका अंग-भंग तब तक नही हो सकता, जब तक खून का रंग बँट नही जाएगा।"[72]

'इब्ने मरियम' कहानी संग्रह की कहानियाँ छोटी विषयवस्तु के साथ गढ़ी गई है। लेकिन इन्सानी संवेदना का सागर यहाँ बड़ी-बड़ी लहरों के साथ हिलोरें मारता हुआ गर्जन करता है। कारण कि नासिरा शर्मा का कहानी संसार सात समंदर-पार की संवेदना एवं सिकन को एक धरातल पर अंकित करता हैं। इस संग्रह के फ्लैप पर लिखा है- "वह इनके माध्यम से कहना चाहती हैं कि भाषा, धर्म, जाति, देश, सरहद, फौज, गोला-बारूद जैसा सब कुछ केवल अपनी कुण्ठाओं को बचाने और महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने के हथियार हैं, जो कभी भी सफल नही हो सकते। सर्वोपरि सिर्फ इन्सान है और उसकी इंसानियत है, जिसे सात तालों में भी कैद नहीं किया जा सकता। वह बहुत दूर तक देखती है और आत्मसात कर अपने व्यापक कैनवास पर 'पेण्ट' करती है। इस रूप में उनके लिए सबसे अलग और सफल कथाकार होने का दावा किया जा सकता है। "[73]

तीसरा मोर्चा-

साम्प्रदायिक एवं आतंकवादी गतिविधियों से जलती घाटी प्रतीक है, उस अमानवीय कृत्यों का जिसने सिन्दूर तिलकित भाल को श्रीहीन कर दिया। हिन्दू, मुस्लिम दो-मोर्चों ने सहृदयता का जो जामा पहना था, राहुल और रहमान के रूप में उसे आज तीसरा मोर्चा ललकारता है, लज्जित करता है। और परिचय देता है कि न मैं हिन्दू हूँ न मुसलमान मै एक औरत हूँ। यह तीसरा मोर्चा यानी नारी संवेदना, नारी की स्वयं की पहचान, खुद की हिम्मत। जो घायल होने पर, बलात्कार होने पर भी अपने परिवार के लिए जीवित रहने की इच्छा रखती है। वह लड़ती है उन तमाम

विचारों से, सवालों से जो उत्पन्न करते हैं विकट ज्वालामुखी । तभी तो सृजन होता है स्त्री विमर्श का उसकी संवेदना की पृष्ठभूमि पर ।

यह कहानी एक ऐसी औरत के जीवन की कथा है जो मजहब के नाम पर नरपशुओं के कोप का भाजन होती है। वर्दीवाले लोग ही जिन्हें रक्षक समझा जाता है वही इस कश्मीरी महिला का बलात्कार करते हैं और उसके दोनों बेटों को मारकर फेंक देते हैं। यह कश्मीरी औरत किस जाति-धर्म की है इसका परवाह करे वगैर राहुल और रहमान उसकी मदद करना चाहते हैं। वह दोनो उसे औरत से पूछते हैं "बहन ! हम तुम्हारी कुछ मदद कर सकते है ?"[74]

सम्प्रदाय और आतंक भरे माहौल में संवेदनात्मक शब्द पड़ते ही वह चौंकी और भयभीत नजरों से दोनों की तरफ निर्निमेष देखते हुए सुबकने लगी । "बहन यहाँ ठहरना खतरनाक है..... बुरा न समझो तो मेरा परिवार आगे चल रहा है, तेज चलो तो उन तक जल्द पहुँच सकते हैं। फिर कोई खतरा नही होगा।"[75]

आशंका, डर और बलात्कार ने उसऔको शारीरिक मानसिक रूप से इतना कमजोर कर दिया था कि वह कराह उठी खड़े होने की असफल प्रयास करती है किन्तु उठ नहीं पाती। राहुल और रहमान लपककर उसकी मदद करना चाह रहे थे, फिर क्या सोचकर उनका हाथ रुक जाता है। वे उसका परिचय पूछते है किन्तु खामोशी के अलावा उन्हें कुछ प्राप्त नही होता है। अन्ततः वे चुपचाप कुछ और इन्तजार करते हैं। सन्नाटा और खामोशी ने उनको घरवालों की फिक्र में डाल दिया। राहुल और रहमान मानवता के कारण बहन की दलील देकर उसे अपने साथ चलने को बोलते है लेकिन फिर भी खामोशी ही छाई रही। राहुल कहता है मैं राहुल हूँ, यह रहमान, हम दोनो बचपन के दोस्त है-

अगर तुम हिन्दू हुई तो हमारी बहन, अगर मुसलमान हो तो रहमान के रिश्ते से हमारी बहन ही लगी. यदि उचित समझो तो कुछ अपने बारे में कहो ताकि...।"76 आखिर कब तक अभिज्ञान सम्प्रदायों द्वारा कराया जायेगा। सहयोग और दया के उपहार में भी अपनी पहचान हेतु स्त्री संवेदनशील रहती है। वह दर्द भरी आवाज में

किन्तु पूरे गर्मजोशी से जवाब देती है "मैं एक औरत हूँ और औरत की अस्मत तो हिन्दू-मुसलमान नही होती जो..."[77]

सहयोग की भावना एवं साम्प्रदायिक सहभाव के आधार-स्तम्भ राहुल और रहमान जो हिन्दू-मुस्लिम के दायरे से बाहर हटकर मानवता का पाठ पढ़ा रहे थे, वहाँ आज तीसरा मोर्चा औरत होने का उन्हें लज्जित करा देता है। औरत के लिए औरत का सामूदायिक रूप से इतना यथार्थ अभिव्यक्ति इब्नेमरियम कहानी के अतिरिक्त अन्यत्र कम ही देखने को मिलता है। वह औरत हिन्दू और मुसलमान शब्द को पुरुष की एकल संपत्ति करार देती है और औरत की पहचान उसकी अस्मत सिर्फ औरत है को प्रतिस्थापित करते हुए कहती है "हिन्दू और मुसलमान तो सिर्फ वह मर्द होते हैं जो अपने मजहब के उन्माद में औरत की आबरु लूटकर अपना धर्म निभाते हैं- मैं कौन हूँ.... मेरा नाम, मेरा मजहब क्या है ? मेरा मोहल्ला, मेरा पता क्या है ? बताऊँ आपको कि मैं दो बच्चों की माँ हूँ और बच्चों का बाप साल भर से लापता है।"[78] मानवता का प्रतीक राहुल और रहमान शर्मिंदा हो जाते हैं। वे पूँछते है कि आखिर वह कौन था जो इतनी बेदर्दी से एक औरत के जीवन को तबाह कर दिया । "पता नही उनका मजहब क्या था । वर्दी में सब एक से लगते हैं। पहले उन्होंने मेरे शौहर का पता जानना चाहा.... मुझे खुद कहाँ पता था ? मेरे इंकार पर उन्होंने भूखे चूहे मेरी सलवार में डाल दिए.....मेरे दोनों बच्चों को इतना पीटा कि वह दम तोड़ गए, फिर फिर मुझे... मैं डर से सुन्न हो गई थीं मेरे चारों तरफ मेरे अन्दर भी अंधेरा छा गया था।" [79] आगे कुछ कहने सुनने की जहमत नही राहुल रहमान ठगे से खड़े रह गये। करुणा का विस्तृत उदगार पूरे कश्मीर घाटी को एक औरत के दर्द में घेर लेता है। सम्प्रदाय के नाम पर, धर्म के हिमायती होने की मृगतृष्णा की बलि हमेशा औरत बनती है। आखिर यह राजतिलक सियासत वाले कितने सदी तक लगाते रहेंगें ? कब तक औरत रौंदी जायेगी ? दोनों की नजरें झुक गई। उस औरत ने कहा "तुम दोनो

जाओ भाई... । मै माँ हूँ। मुझे बच्चों को दफनाना है. पत्नी हूँ. मुझे अपने शौहर का इन्तजार करना होगा. औरत हूँ इसलिए जुल्म के खिलाफ मुझे जिन्दा रहना है।"80

जिन्दा रहने का यह जज्बा नारी संवेदना से प्रारंभ होता है और फिर आन्दोलनों के राह से गुजरते हुए किसी विमर्श में ढलता है। यही प्रमाण है हिन्दी साहित्य मे स्वतंत्र महिला लेखन का जो आज स्वतंत्र स्त्री विमर्श जैसी धाराओं में बह रही है।

इब्नेमरियम-

2 दिसम्बर सन् 1984, भोपाल गैस दुर्घटना में मारे गये लोगों का यथार्थ वर्णन रिपोर्ताज शैली में लेखिका ने उदधृत किया है । गैस दुर्घटना वैज्ञानिक विकास की अतिशयता और संचालन के दुरुप्रयोग की ट्रेन है जिसमें किसी पुरुष और स्त्री के पुरुषत्व या नारित्व का कोई दोष नही। हताहत औरत-मर्द दोनों हुए हैं। भोपात्र गैस काण्ड के कारण होने वाला दुष्परिणाम जैविकीय स्तर पर या तो मर्द-औरत दोनों को प्रभावित करेगा या फिर दोनों को नही करेगा। किन्तु पुरुष की रुढ़िवादी मानसिकता औरत को कटघरे में खड़ा करते हुए उसके प्रजनन शक्ति पर सवाल उठाता है।

कहानी में वर्णित कुबरा और सुगरा दो सगी बहनों की संवेदना को केन्द्र में रखकर इस कहानी का स्त्री संवेदना के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण हुआ है। गैस काण्ड के समय कहानी में वर्णित पात्र 'सुगरा' अपने पिता 'ताहिर' के घर ही होती है। गैस दुर्घटना में कुबरा विधवा हो जाती है। जब स्थिति सुधरी तो ताहिर मियाँ बेटी की विदाई का संदेश उसके ससुराल भिजवाते हैं किन्तु रूढ़िवादी मानसिकता से ग्रसित उसका शौहर और ससुर उसको छोड़ते हुए कहते हैं- "इस जवानी के चलते हमें अपनी नस्ले खराब करनी नहीं है। लूली-लंगड़ी कानी-कुतरी औलादे पैदा हुई हो तो सिवाय भीख माँगने के उनसे और कौन सा काम हो पाएगा आखिर ?"[81]

औरत का जीवन बड़ा कटीला और पथरीला होता है। उसे किसी न किसी वैशाखी की जरूरत पड़ती ही रहती है, कारण कि बिना सहारे और संरक्षण के कब, कहाँ, कौन-सा भेड़ियाँ किस रूप में उसके भोलेपन एवं ममत्व का गला घोंट देगा कहा नहीं जा सकता। अतः पिता ताहिर अपनी उम्र और दशा को देखते हुए सोचता है- "लड़की तो पराया धन होती है। जिसका था उसे बख्श दिया। अब उसे वापस लेने का सवाल कहाँ से उठता है? मायके से लड़की रुखसत होकर जाती है तो फिर शौहर के घर से उसकी मय्यत ही निकलती है। यही अपने घर में देखते और सुनते आए हैं, मगर तुम अपनी दौलत जबरदस्ती मेरे हवाले करने की जिद कर रहे हो।"[82]

ताहिर दर्द से कराह उठा और खुद से प्रश्न करते हुए सोचता है–"तो क्या अब इस शहर की हर लड़की के बाप को अपना मुँह बंद रखना पड़ेगा ? क्या सचमुच इस शहर की कोई भी लड़की साबुत बच्चा जनने के काबिल नहीं रह गई ? क्या यह शहर बाँझ हो गया ?"[83]

गैस काण्ड से भोपात्र मे कुछ-कुछ वैसी ही स्थिति हो गयी थी जैसी द्वितीय महायुद्ध के बाद हुई थी। सारे मर्द बेकार हो गये थे और औरतें विधवा । यदि ऐसा होता कि "मोल का मर्द अगर बाजार में कहीं मिल रहा होता तो वह दोनो (सुगरा और कुबरा) जाकर खरीद लाती और दुकान पर ले जाकर बिठा आती, मगर परेशानी जो सामने थी वह यही थी कि यूँ तो मर्द कौड़ियों के मोल मिल रहे थे, मगर उस भाव से नही जैसा सुगरा और कुबरा चाहती थी। मर्द से फिलहाल कोई रिश्ता बनाना उन्हें बंदर की दोस्ती जैसा लगता था।"[84]

जीविकोपार्जन हेतु कुबरा और सुगरा अपने बटुए के दुकान पर बैठना चाहती हैं किन्तु लोगों को यह भी बर्दाश्त नही हुआ कारण की गैस काण्ड का कुप्रभाव इन दोनों से अन्य लोगों में न फैल जाय। यह पुरुष की निरी मुर्खता भरी सोच ही थी। फिलहाल वे दोनों दुकान-दुकान जाकर रंग-बिरंगे बटुए बेचने लगी।

एक दिन सुगरा का पति मध्य-रात्रि में उससे मिलने आता है। औरत की संवेदना यहाँ जागृत हो उठती है। वह अपने स्वाभिमान को कायम रखते हुए साफ इंकार कर देती है। कारण बिना किसी जुर्म के सुगरा को उसने छोड़ दिया था। सुगरा ने जो कहा उसमें औरत के हक को उजागर किया गया है- "हम औरतें सरापा मुहब्बत होते हैं, सिर्फ मुहब्बत, मगर इसका मतलब यह तो नही कि हमारे जानाना गुरूर की कोई कीमत ही नहीं ?" [85]

'इब्नेमरियम कहानी में उद्धृत यही तीन लाईन पूरे गैस काण्ड की त्रासदी से उकेरे गये रिपोर्ताज शैली के कथानक को, जो एक ट्रेजडी थी, वहाँ के जनता की, किन्तु 'सुगरा' का यह सवाल पूरी कहानी को नारी संवेदना के दृष्टि से देखने पर विवश कर देती है ।

'इब्ने मरियम' संग्रह की कहानियों का कैनवास व्यापक है। पूरे देश एवं विदेश की संवेदनाओं को लेखिका ने एक माला में पिरोने का सफल प्रयास किया है किन्तु स्त्री संवेदना की दृष्टि से 'तीसरा मोर्चा' और 'इब्नेमरियम' कहानी इस संग्रह की श्रेष्ठतम् निधि है।

शामी कागज कहानी संग्रह में स्त्री संवेदना -

शामी कागज संग्रह में कुल सोलह अफसाने हैं। उनका सबका मिजाज अलग-अलग परंतु वे सबके सब उस ठोस विचार के इर्द-गिर्द ही खड़े मिलते हैं, जिसका आधार है औरत की अस्मिता की रक्षा, उसके वजूद की इज्जत और स्वाभिमान बचाने का प्रश्न और धरती पर मानवता को जीवित रखने की चिंता। अफसानों के कंटेन्ट्स की बानगी उनमें भीतर तक उतरने देना बहुत जरूरी है, किन्तु उन्हीं कहानियों के कटेंट्स की बानगी यहाँ वर्णित है जिनमें स्त्री संवेदना के विविध आयामों को विशेष स्थान प्राप्त हुआ है।

पहली कहानी है 'खुशबू' का रंग', वैसे तो खुशबू का कोई रंग नहीं होता किन्तु आलोच्य कहानी के दोनो पात्रों के त्याग, बलिदान क्रांतिकारी तेवर और शारीरिक प्रेम से ऊपर उठे हुए आत्मिक प्रेम की खुशबू अपने रंग से पाठक को सराबोर कर देती है। कथा नायक ईरानी कान्ति से उपजी संवेदना को अभिव्यक्ति देता हैं अत: वह क्रान्तिकारी विचारक/लेखक की श्रेणी में आता है। वह रुढ़ियों को तोड़ने का पक्षघर है। ईरान की गरीबी से दु:खी उसकी आत्मा एवं हृदय की मनोदशा के कारूणिक पक्ष को देखकर प्रभावित हुई एक सामान्य परिवार की संस्कारित लड़की अपना हृदय उसे दे बैठती है। जाति-पाँति, देश-दुनियाँ की परिधि को तोड़ वे दोनों ही स्त्री अस्मिता के लिए चिंतित हैं। एक औरत, मर्द को इतना पाक और सूक्ष्म प्रेम में पगा पाकर क्यों न अपना सर्वस्व समर्पण करें ? कारण कि उसे पता है यह मांसल नहीं सूक्ष्म खुशबू का पौधा है । समर्पण का उदाक्त एवं प्रेम का स्वच्छ, सूक्ष्म रूप इस कहानी के अतिरिक्त: कामायनी की एक पंक्ति में देखने को मिलती हैं । जहाँ श्रध्धा, मनु से कहती है-

दया, माया ममता लो आज
मधुरिमा लो अगाध विश्वास
हमारा हृदय रत्न निधि स्वच्छ
तुम्हारे लिए खुला है पास

आलोच्य कहानी का कथा नायक एक जगह कहता है, "औरतें लिबास नहीं, जो शाम सबरे बदली जाएँ "[86] परंतु दोनों का प्रेम स्थूल रूप नही धारण कर पाया। अपने क्रान्तिकारी विचारों के कारण नायक को मौत के घाट उतार दिया गया। वह प्रेमिका खुशबू सूंघने की लम्हे भर गुनहगार अपने सांसारिक तकाजों को एक ओर रखकर उसकी कब्र पर संदल का कलम रखकर प्रेरणा देती है ताकि उदाक्त विचारों का सिलसिला जारी रहे।

दादगाह-

उस समाज की कथा-व्यथा है, जिसमें सांसारिक सुख-सुविधाओं से सम्पन्न, अजिर्ण की हालत में पहुँचे स्त्री-पुरुष हैं, जो परस्पर सहकार के बजाय अपनी प्रत्येक समस्याओं का समाधान संबंध-विच्छेद में खोजते हैं यहाँ औरत-मर्द में संघर्ष "रोटी का नही, भरे पेट को ज्यादा भरने, ज्यादा भोगने का संघर्ष है।"87

पाश्चात्य दृष्ट्रिकोण का अंधानुकरण एवं धन-वैभव की संपन्नता ने सबसे ज्यादा नुकसान हमारे रिश्तों का किया है। पश्चिमी जीवन शैली ने लालसा बढ़ाई तो आर्थिक मद ने अहंकार। दोनो का संयोग पति-पत्नी के नोक-झोंक भरी मधुरिमा को कुरुक्षेत्र का विस्तार दे दिया। परिणाम ! संबंध विच्छेद । जिस देश में तलाक के लिए व्यक्तिगत अदालतें खोलनी पड़े उस देश का भविष्य कहाँ जाएगा इसकी घोर चिंता अभिव्यक्त करती है यह कहानी | मुक्त जीवन शैली औरत-मर्द को इतना अधिक मुक्त कर दे रहा है कि आने वाले समय में उनके पास मुक्त करने के लिए कुछ बचेगा नही । सिवाह देह के, जिसे खिसियाकर नोंचने के अतिरिक्त औरत-मर्द कुछ नहीं कर सकेंगे । 'हिमायते खानाबदेह' के जज 'अकबर तेहराची' भी मुक्त जीवन के समर्थक हैं। वे उन्मुक्तता में भी पराश्रित हैं और लीला खानम जैसी महिलाओं के आगोश में अपनी मानसिक विश्रान्ति के क्षण खोजते हैं। लीला खानम के द्वारा यें स्त्री के बदलते स्वरूप को लेखिका-ने प्रस्तुत किया है। यथा - "शादी-ब्याह, यह सामाजिक बंधन दरअसल एक-दूसरे का शीलभंग करने का एक सभ्य तरीका हो गया है। जानवरों से इंसान को अलग करने की एक बोगस, बेकार कोशिश ।"88

यहाँ पाकिस्तानी कथाकार 'इंतजार हुसैन' की कहानी 'कछुए' का चित्र प्रासंगिक है "हर नर-नारी का अपना जंगल अपना पेड़ होता है। दूसरे जंगल में ढूँढ़ने वाले को कुछ नही मिलेगा।"[89] आशय यह कि स्त्री-पुरुष के जीवन में तादात्म्य की आवश्यकता महत्वपूर्ण है। वह सहकार, समझौतों पर आश्रित है, जो वस्तुत: आज समाज में दिखाई

नहीं देता । कथाकार ने 'लीला खानम' के माध्यम से ईरानी संस्कृति के बदलते मूल्यों का यथार्थ चित्र खींचा है। समाज में बैलेन्स बना रहे, संबंधों का कसाव ढीला न पड़े इस दृष्टि से 'इंतजार हुसैन' के 'कछुए' की मानवीय संवेदना को एक पुख्ता आयाम प्रदान करने में सक्षम हैं।

शामी कागज-

शामी कागज इस संग्रह का विलक्षण अफसाना है। बिल्कुल यथार्थ की ठोस धरती पर खड़ी, परन्तु उतना ही तरल अफसाना, करुणा से पाठक को भिगों देता है। ऐसा प्रतीत होता है कि यही कहानी इस संग्रह की सारी कहानियों का 'उत्स' है। इसमें औरत की असीम संकल्प शक्ति और आदर्श की अद्भुत झांकी है।

कथा नायिका 'पाशा' की शादी 'मोहसिन' से होती है। विवाह के सात माह बाद ही मोहसिन की मृत्यु हो जाती है। पाशा और मोहसिन अपने अटूट प्रेम के संकल्प में 'मेहरान' नामक पुत्र की संकल्पना करते हैं किन्तु यह संकल्पना स्थूल रूप न ले सकी। मोहसिन की असामयिक मृत्यु ने जहाँ 'मेहरान' के गुदगुदाहट को समाप्त किया था वहीं पाशा को रूहानी एवं जिस्मानी रूप से झिंझोड़ा भी। औरत-मर्द के इन जज्बाती संबंधों की डोर आवश्यकताओं के हत्थे चढ़, आज के युग में जहाँ आसानी से चटक जा रही है वहीं पाशा जैसी महिलाएँ पति के अनन्य प्रेम एवं स्पर्श को किसी व्यक्ति में न ढूँढ़कर अपनी व्यस्तता एवं सूक्ष्म संबंधों की विधायक वस्तुओं में प्राप्त करना चाहती है।

कहानी का टर्निंग पॉइन्ट पति की मृत्यु न होकर "मेहरान्" की संकल्पना का अधूरापन है जो मूर्त रूप न ले सकी । पति के प्रेम में पूर्णत: भींगी हुई नारी उसके मृत्यु पर नहीं रोती है किन्तु पुत्र की अप्राप्ति एवं कमी ने उसे संवेदनशील बना दिया।

पुत्र मेहरान की कल्पना में कोरस में रोना 'लार्ड टैनिशन' की कविता की याद दिलाती है, जो पति की मृत्यु पर नही बेटे को गोद में बैठाते ही रो पड़ी थी। इस कहानी मे लेखिका सिद्ध कर सकी है कि औरत की सार्थकता उसकी संतान है। वह उसके बिना न जी सकती है और न मर सकती है।

कहानी में स्त्री संवेदना का दूसरा दृश्य, पाशा की पति- परायणता, पतिव्रतधर्म की उदाक्त परिकल्पना में दृष्टिगोचर होता है। मोहसिन की मृत्यु मानसिक एवं शारीरिक रूप से पाशा को तोड़ देती है, जब वह नर्सरी में नौकरी करके थोड़ा खुद को सम्हालती है तभी उसका चचाजाद भाई 'मेहराज' का जिक्र करके उससे भविष्य के बारे में कुछ ठोस निर्णय लेने को कहता है "जिस तरह हिम्मत करके जिन्दगी शुरू कर दी है। भविष्य की भी सोच डालो ।"[90] पाशा जवाब देती है "जिंदगी जीना शुरु कहा की है ? बल्कि रोज सुबह जीने की ताकत जमा करती हूँ, रात तक उसे खर्च कर इस आशा में सो जाती हूँ कि काश यह मेरी आखिरी रात हो.। मगर सुबह की सफेदी फिर जीने पर मजबूर कर देती है।"[91]

मेहमूद और पाशा की आपसी बात के दौरान पाशा उससे शादी की बात पूँछती है कि शादी वगैरह तुमने किया कि नहीं, तब वह पाशा से ही शादी करने की बात कहता है और पाशा, मेहमूद के द्वारा मेहरान की संकल्पना को पूर्ण करने का हवाला देता है । तब पाशा को कहती है— "मेहमूद आज के बाद कभी मेरा गम बाँटने की कोशिश मत करना - यह गम ऐसा नहीं है जो खुशी में बदला जा सके।..हमारे तुम्हारे मेहरान् का मतलब है कि मै अपने जिस्म से मोहसिन का हर लम्स मिटा दूँ। हर वह स्पर्श जो मुझे जीना सिखा रहा है। उसे पोंछ डालू..... जब मै दिल और दिमाग से उसे नहीं मिटा सकती तो फिर जिस्म से उसे क्यों मिटाऊँ १ क्या मजबूरी है?"[92]

मेहमूद अकेली जिन्दगी का समर्थक नहीं है। वह जानता है कि संवेदनाओं की टूटन ने 'पाशा' को जज्बाती बना दिया है अतः सोच-समझकर निर्णय लेने की हिदायत

देता है । पाशा आवश्यकताओं और मजबूरियों की प्रतिमूर्ति नहीं वह अपने प्रेमी की यादों को ही अपना स्पर्श मानती है। लम्हों के उस छुवन को वह यादों में संजोकर रखना चाहती है। इसलिए दो टूक शब्दों में मेहमूद को जवाब देती है "अपनी जिन्दगी मेरे साथ खराब न करो महेमूद। मुझसे बेहतर जगह इसका इस्तेमाल करो । जहाँ इसकी जरूरत हो-- जहाँ इसकी कदर हो सके।"[93]

औरत' की अस्मिता और उसके निर्णय का इतना सुथरा, सटीक रूप कम ही देखने को मिलता है जहाँ, वह निर्णय ठोस तरीके से ले किन्तु संयम और आत्मविश्वास दोनों आहत भी ना हो। पाशा बहुत सँम्हल कर महेमूद से कहती है-

"और फिर महेमूद, मै भी कोई 'शामी कागज' थोड़े ही हूँ कि जब जरूरत पड़ी उसे धोकर, दूसरा फरमान लिख दिया - मैं इंसान हूँ और इंसान के दिल पर लिखे हर्क बार-बार धोए नहीं जा सकते है।"[94]

आबे-तौबा-

आबे-तौबा इस संग्रह का वह अफसाना है जो स्थूल से सूक्ष्म की ओर औरत की संवेदनाओं एवं विचारों का भ्रमण करता है । औरत इस तथा कथित पुरुष प्रधान समाज में केवल उपभोग की वस्तु बन, औलादों के बोझ से जहाँ उसे कहना पड़े "ख़ुदा इस बुरे दिन से सबको बचाए।"[95] यह मर्द की भोगलिप्सा का यथार्थ उद्घाटन है। आबे-तौबा उस स्त्री समाज की दर्द भरी दास्तान है जहाँ उस पर कब, कहाँ, कौन राह चलता कीचड़ उछाल दे कुछ इल्म नहीं। आबे-तौबा का शाब्दिक अर्थ है 'पाप के पंक में चाहे अनचाहे गोते लगाकर पवित्र जल को अपनी देह पर छिड़कर फिर भूल न करने का संकल्प, 'सूसन' 'इंजीनियर की पत्नी, सुंदर खुशहाल दो बच्चों की माँ, एवं कुशल मनोचिकित्सक है। वह बच्चों के स्कूल में नौकरी करती है। आलोच्य कहानी में वह 'अमजद' नामक युवक के मानसिक क्रियाकलापों पर अध्ययन कर रही होती है। तभी 'शमशाद' नामक एक नवयुवक योरोप से डिग्री लेकर आता है और महमूद के

केस में ज्यादा दिलचस्पी दिखाता है। शमशाद के कामुक मनोभावों को सूसन महसूस करती है और उसमें दिलचस्पी न लेते हुए पुरुष आमंत्रण को सिरे से नकार देती है। शमशाद बड़ी चालाकी से उसे औरत-मर्द का मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण समझाकर सेक्स के टॉपिक पर बहस करके उसे अपने जाल में फाँस लेता है और अपने कामवासना

को शान्त करता है। सूसन "परिवर्तन का स्वाद चखने की ललक में, अपनी आबरु ही दे बैठी, लेकिन नशा देर तक न टिका, परंपरा अनुसार पश्चाताप करने के लिए 'आबे-तौबा' करने हरम पहुँची, परंतु वहाँ भी एक लंपट मौलवी उसकी सुन्दरता को देखकर उससे प्रस्ताव कर बैठा ।"[96]

सूसन सोचती है यहाँ तो मैं पाक होने आई थी किन्तु धर्म के पुरोधा ही जब नापाक मंसूबो से लबरेज है तो एक आम-औरत जिसे अपने करनी पर पश्चाताप हो रहा हो वह कहाँ जाए ? क्यों जाए ? शायद उसका पश्चाताव फिजूल है। सूसन 'आबे-तौबा' का नाटक करने से बेहतर महमूद द्वारा किए गये कुकृत्यों एवं घाव के निशानों को चाकू से छीलकर निकालना ज्यादा बेहतर समझो । यह उसका सच्चा पश्चाताप है। किन्तु लेखिका की कल्पना जटिल है। वक्ष पर चाकू चलाना स्वयं के हाथों.... कहानीकार का संकेत है, जिस समाज में 'सीगा' प्रथा से पुरुष ने अपनी कुंठा बहा देने का और आबे-तौबा मानसिक करके फिर से पवित्र होने का छद्म प्रचलित कर रखा हो उस समाज की औरत की अस्मिता एवं भविष्य कहाँ जाएगा विचारणीय है।

औरत एक बार अपने दामपत्य जीवन के मार्ग से भटक जाती है, तो वह नित्य-प्रति दूसरे दलदल में फँसती जाती है किन्तु सूसन मानसिक रूप से टूटी है शारीरिक रूप से छली गई है पर उसका स्त्रीत्व उसे फिर उठने के लिए प्रेरित करता है। ठीक है, उसने गुनाह देखा उसे भोगा भी । लेकिन उसका समापन यहीं हो जाता है कि उसने वह अनुभव दोहराया नही । यही उसकी और पूरी स्त्री जाति की जीत है। सुबह का भूला शाम को घर वापस आ जाय तो उसे भूला नहीं कहते।

सुसन सोचती है- “अब वह नहीं रुकेगी ! जरा सी हिमाकत पर अपना सब कुछ नहीं गँवाएगी। वह माँ है, पत्नी है, टीचर है, एक देश की नागरिक है। उसके दायित्व बहुत सारे हैं। वह उन सबको निभाएगी... वह अपने को मरने नही देगी। वह आज तक अपने लिए जी नहीं, फिर अपने लिए केवल अपने लिए मरे क्यों"[97]

लेखिका ने कामकाजी महिलाओं के साथ हो रहे मानसिक, शारीरिक शोषण को इस संग्रह में जितनी जिंदादिली से उकेरा है उतनी ही बेबाक शैली में मार्मिक ठेकेदारों के आडम्बर का पर्दाफाँस भी किया है। वे कहती हैं. "हँसते-मुस्कराते चेहरों में परस्पर न विश्वास था न इत्मीनान । कहकहों के पीछे एक ठंडा भय व्याप्त था जो मुझे मानसिक रूप से बुरी तरह से झिंझोड़ता और कचोटता था। बारिस होने से पहले वाली घुटन के बीच, दिखावे के मजबूत कवच से ढके-छुपे सीने को कलम के जरिए उघाड़ने के लिए आतुर हो उठी जिनके होंठ सिले हुए थे और उसी दर्द को समझते हुए जानने की आतुरता और व्याकुलता का प्रमाण ‘शामी कागज' के रूप में आपके सामने है।"[98]

शामी कागज की अन्य कहानियाँ ज्यादातर ईरानी संस्कृति और क्रान्तिकारी संघर्षो पर आधारित हैं जिनका उल्लेख यहाँ करना तर्क संगत नहीं जान पड़ता। बकौल नासिरा शर्मा “अहसास की भूमि पर रचा मेरा यह कहानियों का संकलन 'शामी कागज' एक ऐसा' 'दर्पण' है जो ईरानी रंगों से सराबोर होने के बावजूद इंसानी भावनाओं का प्रतीक है और उसमें हर देश, भाषा, रंग का इंसान अपना प्रतिबिम्ब देख सकता है। सभ्यता ने उसे चाहे नई पहचान देकर विभिन्न नामों और विभिन्न देशी सीमाओं से बाँध दिया है, मगर इससे इंकार नहीं कि हम सब आदम की औलाद वास्तव में एक-दूसरे के अंग हैं जिनकी सृष्टि और उत्पत्ति का स्रोत एक है।”[99] वह आगे लिखती हैं “मेरी ईरान पर लिखी ये चंद कहानियाँ उन यात्राओं की उपलब्धियाँ हैं जो मैने पिछले चार सालों में की है।”[100]

अत: कहा जा सकता है कि शामी कागज संग्रह के ज्यादातर अफसाने ईरान की क्रान्ति पर आधारित हैं। किन्तु जहाँ-जहाँ, जिस-जिस कहानी में स्त्री संवेदना संघर्ष करती नजर आई हैं उसका विवेचन दृष्टव्य है ।

सबीना के चालिस चोर कहानी संग्रह में स्त्री संवेदना-

आजादी के बाद समाज में बहुत तब्दीली आई। स्वप्निल आखे निराशा के सागर में डूब गई । सपनों में रंग भरता जनमानस बेरंग हुआ । एक तरफ पूरी दुनिया के तार जुड़े तो दूसरी तरफ आपसी रिश्ते बेतार हुए । सबसे ज्यादा यह कि रिश्ते बेतार हुए चाहे देश के हों, परिवार के हों टूटे। इसी टूटन और बिखराव की पड़ताल हैं ये कहानियों जाहिर है यह पड़ताल नारी संवेदना की ओर भी ले जाती है। उन्ही संवेदनाओं की छानबीन एवं अनुसंधान परक विवेचन हो पाना ही, नारी संवेदना के विविध आयामों की पूर्णता का प्रमाण है। संग्रह की भूमिका के दो शब्द में लेखिका ने अपना विचार व्यक्त किया है "वे मेहनत कश लोग जो मेरी कहानियों के पात्र बने, जिनके मन में इकलौती अभिलाषा एक रोटी इज्जत से कमाकर खाने तक सीमित रह जाती है और उस सपने को लेकर वे कैसी अपमानजनक स्थितियों से गुजरते हैं ? जो उनके न चाहने पर भी उन्हें बेचारा घोषित करती है। यह वर्ग विज्ञान के लिए आविष्कारों, चिकित्सा की नई सुविधाओं, तकनीक की नई उपलब्धियों, शिक्षा में हो रहे बौद्धिक शोध, खान-पान के विज्ञापनों' में दिखाये जाने वाले नित्य नये व्यंजनों और बेहतर जिन्दगी जीने के प्रयोगात्मक सिद्धातों से न केवल वंचित बल्कि बेखबर रहते हैं। वे देश की उत्पादन शक्ति में सहयोग देकर भी शोषित वर्ग में खड़े नजर आते हैं। जिनपर रोज की जरूरतों के लिए जनसाधारण निर्भर रहता है। वे खास आदमी न होकर आम कहलाते हैं। उनकी जरूरतें, आरजुएँ, सोच, व्यवहार रहन-सहन सब मामूली रहते हैं। संक्षेप में वे किसी भी समय दो कौड़ी के लोग की उपाधि से सुशोभित कर दिये जाते हैं।"[101]

'सबीना के चालिस चोर' कहानी संग्रह में आजादी के पचास साल बाद के हालात को पूरी सिद्दत से देखा जा सकता है। अपने समय को दस्तावेज करती इन कहानियों में कराहता, बिलखता हिन्दुस्तानी समाज है। तत्कालीन समय में मेहनत आदमी की बरबाद होती जिन्दगी और लुटते अरमानों का कारवां है। "सबीना के चालिस चोर कहानी में अलीबाबा चालिस चोर कहानी प्रतीक के रूप में मौजूद है। जो सबीना की मासूम मानसिकता के बहाने उस हिन्दूस्तान का नजारा दिखाती है जिसमें हम साँस ले रहे हैं। गिनती में वे जितने भी हों मगर उन चोरों को हम बखूबी पहचानते हैं।

इस संग्रह की कुछ कहानियों में स्त्री संवेदना के गहरे चित्र अंकित हुए हैं तो कुछ में रंगो के छीटे मात्र पडे हैं। दोनों का सांगोपांग विश्लेषण नारी संवेदना एवं उसके वैचारिक मुक्ति के मार्ग को प्रदर्शित करने में कारगर साबित होगें।

ततईया-

युग बदल रहा है, मानसिकता बदल रही है। नित्यप्रति समाज सभ्यता और विज्ञान की सीढ़ियाँ चढ़ रहा है परंतु कुछ न कुछ छूट रहा है। किसी को समझ में नहीं आता है कि व्यक्ति को व्यक्ति से क्या चाहिए ? वह सामने वाले से क्या अपेक्षा करता है? अपेक्षाएँ पूर्ण होने के बावजूद भी भयभीत, निराश हताश और चिड़चिड़ेपन की गोलियां निगल रहा है। अभिप्राय मात्र 'गोलियों से नहीं, चाहे वह रक्त के आँसू हों या ताक पर सम्मान, मर्यादा की चादर हो या मन का भ्रम 'ततइ्या' तो काटती ही है। उसका स्वभाव ही काटना है। मन की तटइया हो या फिर तुच्छ जीव। बड़ी फुर्ती होती है इनमे डंक भारती हैं और छूमंतर | शरीर पर लगे डंक पर तो आचार-खटाई घिसी जा सकती है किन्तु वहाँ क्या लगाएँ जिसका कोई आकार ही नहीं है। 'ततइया' एक कुत्सित प्रवृत्ति है जो चाहे अनचाहे हमारे जीवन में प्रवेश कर जाती है।

'यह पीड़ा सिर्फ 'ततईया' कहानी की स्त्री पात्र 'शन्नो' का नहीं है और न यह एक घर की कहानी है। कहानी में वर्णित ततइया हर घर, परिवार, समाज, राष्ट्र यहाँ तक कि विश्वफ़लक की संवेदना, सिकन और छटपटाहट है। लेखिका की पैनी दृष्टि इस तथ्य का लेखा-जोखा करती है कि मानव कहाँ टूट रहा हैं ? किससे मात खा रहा है ? सबसे बड़ी समस्या तो घर के वातावरण में अपने ही करीबी, कोई अपना खास जो अनचाहे ही हमारे जिन्दगी में प्रवेश कर जाता है और पूरे सकारात्मक तथ्य को कसैला बना जाता है।

कोई शारीरिक रूप से तो कोई मानसिक इन्हीं तथ्यों का पृष्ठपोषण 'नासिरा शर्मा' की कहानी 'ततईया' करती है। 'सहजो बारिन का बेटा 'युध्धवीर' का विवाह 'शन्नों' से होता है' शन्नो साँवरी, सलोनी, कमसिन है, जिसका नाज काले-कलूटे परिवार 'युध्धवीर' की माँ को हमेशा रहता है। "आँखों में संतोष भरी खुशी का उजास भर उठता है कि उसका घर भी फल-फूल उठा है। कभी-कभी मन ही मन कह उठती इस काले बारी परिवार में यह साँवली सलोनी कहाँ आ गई।"[103]

व्यक्ति का सुन्दर होना ही यदि अभिशाप बन जाय तो बेचारी शन्नों की क्या गलती ? लेखिका का समाज से खुला प्रश्न है कि आखिर इस कटघरे में औरत ही क्यों रखी जाती है। यह प्रश्न पुरुष समाज से ही नही बल्कि स्त्री समाज से भी है जो स्त्रियों में भी रहकर, पुरुषोचित व्यवहार कर अपनी ही बेटी, बहू को भ्रमवश हाशिए पर ला खड़ा करती हैं। नासिरा शर्मा खुली चर्चा में यह स्वीकार भी करती हैं कि "स्त्री-पुरुष एक चने की दो दाले हैं। कई बार खुली चर्चा में लेखिका ने कहा है, मैं आधी दुनिया के लिए नही बल्कि 'पूरी दुनियाँ के लिए लिखती हूँ।

'ततइया' कहानी में यह सिद्धांत चरितार्थ भी हुआ है परंतु औरत ही औरत की दुश्मन बन जाए तो क्या करेगा स्त्री विमर्श? शन्नों की सुन्दरता ही पुरुष आकर्षण की केन्द्र बिन्दू है जिसका पूरा का पूरा मूल्य 'शन्नों' को चुकाना पड़ता है। गाँव में राम

की झांकी निकली है 'शन्नो' राम-सीता-लक्ष्मण को देखकर भाव-विभोर हो जाती है, तभी किसी ने उसके हाँथ को पकड़कर अपनी और घसीटता हुआ रात्रि के अंधेरे में खीच ले जाता है। "अचकचाकर उसने हाथ पकड़ने वाले को ताका तो सन्न रह गई। नशे में झूमता एक अधेड़ सामने खड़ा था लाल-लाल आँखे, बड़े-बड़े बाल। शन्नों-चीखना चाहती थी से मगर डर कर थर-थर काँपने के अतिरिक्त उसके मुँह बोल न फूटे ।"[105]

नासिरा शर्मा ने यहाँ स्त्री की विवशता को दिखाने का प्रयास किया है। आखिर शन्नों किससे डर गई ? शराबी से नहीं.. नही वह तो एक धक्के का आदमी था, समाज से परिवार से या उस मनोवृत्ति से जो उसके कल्पना के बाहर थी। लोग क्या कहेंगें ? "हारमोनियम साफ करते हुए गायक बाबू ने जो यह दृश्य देखा तो! लगा जैसे गली के नुक्कड़ पर अनार छूटे हो।"106 और आनन-फानन में 'सहजो' से सारी बात बता दिया। समाज का डर सम्मान के लिए किसे नहीं होता है। बेटे को उलाहना देती है। "भाग गई तेरी घरवाली क्या बैठा है मुँह छिपा के जा देख कहाँ गई कुलच्छनी... पूरे डेढ़ किलो की करधनी थी, पाँच, छ : तोला सोना सब ले गई नाशपीटी।"[107] आज समाज में व्यक्ति के अपेक्षा वस्तु मूल्यवान हो गई है। ' शन्नों' का क्या हुआ ? वह कैसी होगी ? यह खयाल सहजो बारिन के मन में न आकर गहनो की चिंता ज्यादा है। लेखिका यह दिखाने का प्रयास की है कि लोग होते हैं प्यार करने के लिए और चीजें होती हैं इस्तेमाल करने के लिए मगर आज का समाज चीजों से प्यार और लोगों का इस्तेमाल करने लगा है। "शन्नों भाग गई ? युद्धवीर को सहसा विश्वास न हुआ ।"[108] रात की अंधेरी में खोजता हुआ, शन्नो को सड़क पर घर ओर आते देख खुशी से निहाल हो जाता है। पति का आस्वासन और लाड-त्यार पाकर शन्नो मुतमईन हो जाती है।

युद्धवीर भी पत्नी को पाकर गदगद हो उठा। न शिकवा न शिकायत

लेखिका का समाज को सीधा संदेश है कि दाम्पत्य जीवन की खुशहाली एक दूसरे के विश्वास पर निर्भर करती है। संबंधों की मधुरता इंसान को इंसान बने रहने का पाठ पढ़ाती है। कितना भाग्यशाली महसूस करती होगी वह स्त्री जिसको परिवार से, पति से प्यार मिले । कौन नही चहता घर में सुमति रहे ? क्यों मनुष्यता को साँप सूँघ जाता है ? हर औरत पहले माँ होती है इसके बाद उसका कुछ और पहचान है। कितना विशाल हृदय है उसका : उसको उसी नजरिए से क्यों नहीं देखा जाता । आखिर कौन देखे ? अगर बाहरी लड़ाई होती तो तरकश के सभी अस्त-शस्त्र प्रयोग किये जा सकते हैं; किन्तु आन्तरिक अंर्तद्वंद्व, उहापोह पर कौन सी तीर चलाया जाए। समाज कहता है कि अमुक स्त्री ने आत्महत्या कर लिया। अमुक की बहू को ब्रेन हैमरेज हो गया आखिर कोई यह क्यों नहीं कहता कि उस स्त्री का कत्ल कर दिया गया।

शन्नो पति का प्यार पाने के बावजूद सास के कहर का शिकार होती है। प्रतिदिन उसको कलमुंही कुलच्छनी का डंक मारा जाता है "बच्ची थी दूध पीती जो पकड़ ले गया.... पहले से कुछ लाग-लपेट होगी। माँ की जली कटी सुन युध्धवीर हतप्रभ रह गया। ऐसा कुछ नहीं है माँ नसे में वह वहीं फुटपाथ पर डाल गया था, यह जान बचाकर घर लौट रही थी तभी मैं पहुँच गया था । युद्धवीर के स्वर में कुछ खीझ थी।"[109]

शारीरिक सुन्दरता और आभूषणों से लदी शन्नो कभी सास की लाडली होती थी । आज मैली-कुचैली साड़ी पहने आभूषण विहीन। उसके मुँह की आभा पर जैसे चन्द्रग्रहण लग गया हो। शन्नो घर से बहिष्कृत नहीं की गई क्योंकि सहजो को समाज का डर था कि लोग क्या कहेंगें ? लेकिन शन्नो को उन सब अधिकारों से वंचित कर दिया जिसकी वह अधिकारी थी। नासिरा शर्मा भी यह दिखाने का प्रयास

किया है कि पत्नी, पति के होते हुए भी वैधव्य जीवन जीने पर मजबूर है। अपनी बात रखने की भी आजादी उसे न मिले तो ! उस स्त्री पर क्या गुजरती होगी ? इस समाज से कौन पूँछे कि औरत अपनी जबान का इस्तेमाल अपने जब्बात को बयान करने में यदि नहीं कर पाती है तो इससे बड़ा अन्याय उसके साथ क्या हो सकता है कि वह पूरी ईमानदारी से अपने सच के साथ जी भी नहीं पा रही है।"[110]

समाज में हर चौथा घर ऐसा दिख जाएगा जहाँ नारी किसी न किसी आंतरिक दंश से प्रताड़ित है। वह घर के चहारदीवारी में कैद प्रतिपल छिज-छिजकर दम तोड़ रही है। न कोई उनकी संवेदनाओं को समझने वाला है न इनकी आँखो में से बहती विवशता की कद्र करने वाला। नारियों को इस स्थिति में अपनी जिन्दगी सड़ांध लगने लगती हैं। पास-पड़ोस की नजर में शन्नो बीमार तो नहीं है। बीमारी खोजी जाती है और दवा भी दी जाती है पर कोई बीमारी हो तब ना। बीमार तो सारा वातावरण है किन्तु इसकी पीड़ा केवल व्यकति विशेष भुगत रहा है। केवल नारी नहीं, पुरुष भी । मन की 'ततइया' समाज को धीरे-धीरे खोखला करती जा रही है। चाहे जितना उपक्रम करें पर जो घटित हो रहा है उसे हम खुद पहचान नही पा रहे हैं, या यूँ कहें कि पहचानना नही चाहते। सबसे बड़ी बात तो यह है कि हम अपने ही खून को संदेह के कारण हाँसिए पर खड़ा कर देते हैं। यह जानने का प्रयास नहीं करते कि ऐसा क्यों हुआ ? बल्कि आरोप लगाते हैं कि ऐसा क्यों किया ? और उस नरक-कुण्ड मे झोंक देते हैं जिसका अधिकारी वह यथार्थत: नहीं होता। शन्नो इसी लघुता का शिकार होती है। दर्द, शिकन अंतःकरण के तंतुओं को इस कदर तोड़ती है कि 'शन्नो' चेतना-शून्य हो जाती है। हालांकि 'ततइया' कहानी में देर से ही सही कहानी का सुखांत होता है। 'सहजो बारिन' का हृदय परिवर्तन सम्राट अशोक की तरह होता है। "दूसरों के लिए लड़ना कितना सरल है 'सहजो' मगर जब स्वयं पर बनती है तो सब कैसा कठिन-जटिल लगता है।"[111]

सहजो को पश्चाताप होता है अपनी ज्यादती पर और बहू को सभी अधिकार प्राप्त होते हैं। 'अंत भला तो सब भला' किन्तु वास्तविक जीवन में यह उक्ति लागू नही होती है । लेखिका की कहानियाँ देश-काल के एक व्यापक दायरे में भ्रमण करती हैं । हमको अंत:चक्षु को खोलकर विषयवस्तु की समग्रता में प्रवेश करना होगा। 'ततइया' को अपने भीतर खोजना और उसका परिमार्जन करना होगा । ततइया व्यक्ति की मूलप्रवृत्ति एवं मानसिकता है, हर इंसान में यह अदृश्य रूप में विद्यमान रहती है। जिस प्रकार दुःख शाश्वत है, अंधकार, अज्ञान, असत्य ये सब शाश्वत हैं। क्रमश: प्रकाश से अंधकार, ज्ञान से अज्ञान और सत्य से झूठ को हम दूर रखते हैं। तदनुरूप 'ततइया' भी एक प्रवृत्ति है जो मूल में निहित है। कुत्सित विचारों रूपी जल पाकर वह अभिसिंचित हो उठती है और सारी परिस्थिति का स्थितिविपर्यय कर देती है। 'रामचरित मानस' की पात्र 'कैकेई' और 'मंथरा' की कुमति का प्रतिफलन ही है कि, अयोध्यापुरी चौदह वर्ष तक रामविहीन रही।

कथाकार की कहानियाँ साम्प्रदायिकता और फिरकापरस्ती के स्थान पर मानवीयता के तंतुओं की खोज करती है। दिक्काल से परिवर्तित होते रूपों और बदलते मूल्यों से बनने वाले समाज को भीतर से पहचानने का प्रयत्न यदि नासिरा शर्मा की विशेषता हैं तो नारी-मन और जीवन को अनेक-अनेक परतों को खोजने का उपक्रम भी इन कहानियों की एक विशेषता कही जाएगी। नासिरा शर्मा लिखती हैं - "यह तो बहुत बाद में जाना कि कहानियाँ परिंदों की तरह होती हैं जिन्हें कैद करके नही रखा जा सकता है। उन्हें परवाज भरना है खुली हवा में या कि घुटती फ़िज़ा को उनमें निहित ताजगी चाहिए। यह सच मैंने स्वीकार कर लिया ताकि कहानियाँ हमेशा नयी और ताज़ा बनी रहती है चूँकि उनका स्वभाव चंचल होता है। वह किसी एक जगह टिककर नहीं बैठ सकती है।"[112]

'ततइया' 'कहानी संग्रह की समग्र कहानियों की संवेदनाएँ एक बुलबुल की तरह है। जो उड़ान कितना भी भरे किन्तु अपने बसेंरे को कभी नहीं छोड़ती शाम होते ही वह अपने आवास पर, परिवार के साथ कलरव गान करती हैं। इस कहानी की नायिका 'शन्नों' पारिवारिक कलह के धूप-छाँह को झेलती हुई ; समाज के द्वारा संदेह के दायरे में रहकर पूरी कहानी में सघर्ष करती नजर आती है किन्तु शाम होते ही! कहने का तात्पर्य कहानी समाप्त होने से पूर्व 'सहजो वारिन' अपनी ममता को नहीं रोक पाती और शन्नों को वही सम्मान दोबारा प्रदान करती है। भारतीय संस्कृति में यह कहावत यह प्रचलित है कि 'सुबह का भूला यदि शाम को वापस आ जाय तो उसे भूला नही कहा जाता है" नायिका की सास भी कुत्सित मनोवृत्ति से बाहर निकलती है। देर से ही सही उसको अपने किए पर पश्चाताप होता है मेरी मत मारी गयी थी। तुझे मेरी उमर लगे बारिन ने बहू को छाती से लगाया। शन्नों सुबक पड़ी। 'बड़े क्रोध न करें तो छोटों को प्यार कैसे मिले ? जेवर की गठरी बहू को थमा, माथे पर प्यार कर बारिन आँखे पोंछती बाहर निकली ।"[113]

कहानी समाज सापेक्ष होकर साहित्य विधा का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करती है। जिसमें स्त्री-विमर्श के नाम पर कोई मुद्दा उठता तो नहीं दिखता किन्तु स्त्री संवेदना की परत को मनोविश्लेषणात्मक स्तर पर जरूर उकेरा गया है। परिवार एवं समाज दोनों को कहानी में सांस्कृतिक तहजीब के साथ कटघरे में खड़ा किया गया है। कहानी की समाप्ति भी भारतीय संस्कृति एवं परंपरा के साथ होती है- "युद्धवीर के जाने के बाद बारिन ने तुलसी के आले के सामने माथा नवाया और मन ही मन बोली कृपा आपकी जो मन की ततइया के डंक तोड़ने में सफल भई ।"[114]

तक्षशिला-

कामकाजी महिलाओं की संवेदना को अपने कैनवास में लपेटे 'तक्षशिला' कहानी 'सबीना के चालिस चोर' संग्रह की अगली कड़ी है जिसमे स्त्री-संवेदना के चित्र दिखायी

पड़ते हैं। तक्षशिला प्रतीक है मजबूती और अडिगता का जो खण्डहर हो जाने के बाद भी अपनी दिवारों के साथ खड़ा है। वैसे ही जब औरत की अस्मिता एवं स्वाभिमान की बुनियाद, दीवारें और छत उसके स्वयं के मजबूत इरादों द्वारा निर्मित होगा तो कोई भी मर्द, औरत को बुरी नजर से देखने की हिमाकत नही करेगा।

आलोच्य कहानी का कैनवास बहुत कुछ 'ततईया' कहानी के कश्य से साम्य रखता है किन्तु पारिवारिक एवं बाहरी कलेवर के कारण दोनों में विभिन्नता आ गई है। शन्नो जहाँ पारिवारिक कलह का शिकार होती है उसके उलट इस कहानी की नायिका 'निगार' बाहरी पुरुष के अमानवीय व्यवहार से संघर्ष करती नजर आती है। 'निगार' एक दैनिक समाचार-पत्र में काम करती है। उसका विवाह 'परवेज' के साथ हो जाता है किन्तु शादी के बाद भी वह अपने पेशे को नहीं छोड़ती । इससे किसी को कोई आपत्ति भी नहीं है। अचानक बिहार में 'फ्लड' आने की वजह से उसे तीन दिनों तक रिपोटिंग करने के लिए बाहर जाना था। उसने अपने पति से इस संदर्भ में बात की तो वह भेजने पर राजी हो गया किन्तु निगार की सास, बहू के इस क्रियाकलाप पर पूरा आसमान सिर पर उठा लिया "दीवानी हो गई है लड़की क्या ? हाथ की मेहंदी छूटी नहीं है अभी और दुल्हन, दूल्हा को छोड़कर सफर पर जा रही है।"[115]

अपनी अस्मिता की खोज में यदि छोटे-मोटे संघर्ष मिले तो कोई फर्क नहीं पड़ता इसी सोच के साथ अपनी नयी पहचान बनाते हुए 'निगार' पंद्रह दिन के लिए विदेश यात्रा पर गई थी जिसमें पति का पूरा सहयोग शामिल था। जब औरत पंख फैलाकर खुले गगन में उड़ना चाहती है तब अक्सर ऐसा देखा गया है कोई-न-कोई मानसिक रोगी अपने रोग के विषाक्त धार से उसके पंख को कुतरने, चरित्र को दागदार बनाने की कोशिश करता है।'निगार' के साथ भी ऐसा ही हुआ उसी के ऑफिस के 'अन्सारी' उसके साथ गैर-मानवीय हरकत करने की कोशिश करता है। अंसारी की बदतमीजी निगार सह नहीं पाती वह सोचती है- "में सब कुछ परवेज को बता

दूँगी....कितना बदतमीज़ था वह आदमी क्या समझते हैं ये मर्द अपने को ? हर औरत जो बाहर काम करती है, क्या उनसे फ्लर्ट करने के लिए निकलती है ? कोई विदेशी हो तो आदमी भूल भी जाए, अपने ही लोग कैसी बदतमीजी पर उतर आते है ।"[116]

कथा नायिका छोटी-छोटी अड़चनों पर विशेष ध्यान न देकर अपने कर्तव्य पथ पर आगे बढ़ती रही तभी एक दिन अंसारी ऑफिस से लौटते हुए उसे अपनी स्कूटर पर बैठने का इशारा करता है। निगार के इंकार के बावजूद वह उसे कंधे से स्पर्श करता हुआ अपनी पाशविक वृत्ति का पहचान कराता है। स्त्री समस्या से तो संघर्ष कर सकती है। घर अपने दम पर चला सकती है। कभी भूखे पेट सोना पड़े तो उसमें भी उसे इतनी समस्या न होगी जितनी पीड़ा उसके स्वाभिमान को ठेस पहुँचाने पर होती है। स्त्रीत्व ही उनका गहना' है जब उसी पर कुठाराघात हो रहा हो तो कोई ठोस कदम उठाना एक स्त्री का धर्म है। वह परेशान रहती है कि क्या उपाय किया जाय तभी 'परवेज' उससे पूछता है कि क्या बात है 'निगार' कुछ परेशान दिख रही हो ?

'निगार' कहती है"वह अन्सारी.. एक्सप्रेसवाला अपने को जाने क्या समझता है? पन्द्रह दिन मेरे इंग्लैंड में गारत किये, अब यहाँ पीछे लग गया है। 'निगार' चाहती है कि 'परवेज' अंसारी के खिलाफ कोई ठोस ऐक्शन ले किन्तु 'परवेज' चाहता है कि निगार खुद ही रएसी समस्याओं का निदान करना सीखे । कब तक ऐसे लोगों से भागेगी ? आखिर हर जगह उसे मेरा संबल नही मिलेगा अत:, औरंत को मजबूत इरादों के साथ समस्या के खिलाफ स्वयं खड़ा होना पड़ेगा । वह 'निगार' को 'तक्षशिला' के तस्वीर के समीप ले गया और उससे पूँछा कि इस चित्र को देख रही हो ? बात निगार के समझ के बाहर थी किन्तु पसंदीदा तस्वीर देख वह उसमें भाव-विभोर हो गई। तब परवेज ने कहा " 'तक्षशिला' बौद्ध युग का विद्यालय था। उसकी दीवारें पत्थर की थीं। इसलिए आज भी मौजूद है, खण्डहर के रूप में । मगर छत लकड़ी की थी, समय की

दीमक ने, धूप और बारिश ने उसे रहने नही दिया...तस्वीर बहुत सुन्दर है उसे गौर से देखो निगार उसमे छुपे मतलब का, अहसास को समझो।"[118]

'परवेज' के रूप में यहाँ लेखिका स्वयं मुखर हो उठी है। वह स्त्री को मजबूती प्रदान करने हेतु जैसे स्वयं संजीदा हो गई हो। पुरुष-पात्र के माध्यम से औरत के मुरझाए आत्मशक्ति को जगाने का काम बड़ी बारीकी से किया गया है। वह कहता है "औरत खुले आसमान के नीचे अपनी पहचान बनाने में व्यस्त है। यह संघर्ष बहुत सुन्दर है। जैसे इस तस्वीर का वातावरण, रंग और आसमान। मगर उस संघर्षरत औरत के नीचे अभी सख्त जमीन नहीं है जिस पर वह विश्वास के साथ खड़ी हो सके, जैसे इमारत के खण्डहर के पास छत नहीं है। आज की औरत के पास न छत है न जमीन। सिर्फ दीवारें.... सिर्फ दिवारें हैं । उनपर 'छत' कौन डालेगा ? क्या कोई मर्द ? तब वही शोषित बेचारी औरत होगी...। औरत को यह काम स्वयं करना होगा। मर्द तो अपना हथियाया अधिकार इतनी जल्दी वापस नही करेगा। निगार इन दरिन्दों, इन हब्शी भेड़ियों से यूँ डरकर कहाँ तक भागोगी ?"[119]

इस प्रकार लेखिका ने 'सबीना के चालिस चोर' कहानी संग्रह में स्त्री संवेदना के दो अफसानों में संपूर्ण संग्रह का उत्स समाहित किया है। जहाँ 'ततइया' कहानी की पात्र 'शन्नो' दया और करुणा से दुत्कार और प्यार दोनो पाती है वहीं 'तक्षशिला' कहानी की नायिका लेखकीय उपदेश से स्त्री की मजूबूती एवं ताकत के साथ पुन: जीवन में आगे बढ़ने का गुर सीखती नजर आती है.

ख़ुदा की वापसी कहानी संग्रह में स्त्री संवेदना-

नासिरा शर्मा का छठा कहानी संग्रह 'ख़ुदा की वापसी' उन प्रश्नो को सामने लाती है जो हकीकी ख़ुदा की मान्यता को गौण और मजाजी खुदाओं को मुख्य भूमिका में प्रतिष्ठित होता देख रहा है। वैसे तो यह संग्रह मुस्लिम तबके के संवेदनात्मक कुठाराघात से संदर्भित है किन्तु औरत को छलने का व्यवसाय प्रत्येक

धर्मों सम्प्रदायों एवं जातियों में एक जैसा ही है। जो पुरुष अपनी अहंवादी या तानाशाही सोच, शक्ति को अकारण ही औरत के ऊपर लादना चाहता है, वही नारी संवेदना एवं सिकन को असहिष्णु बनाता है। "यदि औरत को अपनी लड़ाई खुद लड़नी है तो फिर अपने लिए बनाए शरियत कानून का पूरा ज्ञान और देश के अन्य धर्म-कानूनों को भी जानना जरूरी है, तभी वह अपनी लड़ाई लड़ सकती है और एक दूसरे की मदद कर सकती है वरना दूसरों के भरोसे रही तो उसको वही मिलेगा जो दूसरे उसे देना चाहेगें ।"[120]

यदि इस संग्रह ही उन उहानियों को जो स्त्री संवेदना एवं मुक्ति से संदर्भित हैं, धर्म विशेष के दायरे से आगे बढ़कर सम्पूर्ण स्त्री-जाति के कैनवास में देखें तो ! आवश्यक हो जाता है कि नारी-शिक्षा आर्थिक स्वतंत्रता, सामाजिक सहभागिता एवं संवैधानिक अधिकारों की पूर्ण तालीम ही औरत को उसके अधिकारों के साथ जोड़े रह सकती है। यह जुड़ाव कायम रखने हेतु औरत 'अपनी लड़ाई' और संघर्ष खुद जारी रखे कारण कि "पूरी दुनियां में अनेक औरतें अपनी-अपनी तरह से यह लड़ाई लड़ रही हैं। उनके द्वारा किये गये सर्वे की रिपोर्ट पढ़ने से पता चलता है कि शरीयत के नाम पर कैसे-कैसे जुल्म ढाकर औरतों को उनके अधिकारों से वंचित किया जाता है। इस्लाम ने यदि औरतो को बराबरी का अधिकार दे रखा है तो फिर वह अपने समाज, परिवार में इस तरह कैद क्यों रखी जाती हैं ? एक तरफ कयामत के दिन मुरदों की पहचान माँ के नाम से होगी बाप के वंशवृक्ष से नहीं, फिर उसी औरत को आखिर प्रताड़ित कौन कर रहा है-सियासत समाज, अज्ञानता ? जवाब साफ है कि वह मर्द है जो औरत के अधिकार का हनन करता है। मगर क्या औरत कम कसूरवार है जो अपने अधिकारों को लेना नहीं जानती है, उसको समझती नहीं, उसको पढ़ती और 'दूसरी औरत को बताती नहीं है।"[121]

संग्रह की तमाम कहानियाँ उपरोक्त प्रश्नों को उठाती भी हैं और उनका निदान भी करती है। लेखिका द्वारा उठाया गया प्रश्न औरत के हितों से संबंधित जागरूकता पैदा करती है, जागरूकता का प्रतिफलन भी हो रहा है। सदियों से परंपरागत चली आ रही 'तीन तलाक' रूपी कुप्रथा जो मुस्लिम परिवार की औरतों के लिए अभिशाप थी, जिसे धर्म का लबादा पहनाकर कठमुल्लाओं ने औरत जाति को छलने का अधिकार सिद्ध किया था, आधुनिक औरत की स्वत: की लड़ाई और संवैधानिक न्याय प्रणाली की सुधारात्मक कार्यव्यापार द्वारा 'राष्ट्रपति' 'रामनाथ कोविद्' ने 'तीन तलाक बिल' को मंजूरी दे दी। इस मंजूरी के साथ ही देश में तीन तलाक कानून' 19 सितम्बर 2018 से लागू हो गया।

लेखिका नासिरा शर्मा स्वयं मुस्लिम 'सिया' परिवार से हैं। विभिन्न देशों, इस्लामिक देशों, धार्मिक पुस्तकों एवं पत्रकारिता के व्यवसाय के माध्यम से उन्हें यह समझने में बेहद आसानी होती है कि मुस्लिम औरतों की सबसे बड़ी मुसीबत इस्लाम-धर्म की आड़ में वह मुल्लाओं की निजी मानसिकता से उत्पन्न तानाशाही विचार है न कि धर्म। बकौल नासिरा शर्मा - "धर्म केवल योजनाबद्ध तरीके से जीवन जीने का एक रास्ता है। आज धर्म को समझना हमारे लिए बेहद जरूरी हो जाता है क्योंकि उसका गलत प्रयोग इंसानो की जिन्दगी को बेहद दुश्वार बना रहा है।"[122]

लेखिका स्वयं इस संग्रह के 'दो शब्द' में कहानी प्रारंभ होने से पूर्व ही अपनी अध्ययन शैली, जन्मजात सिया परिवार से संबंध एवं विभिन्न ईस्लामिक देशों की यात्रा, धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन से अनुभावित होकर लिखती हैं- "औरत को गुलाम बनाने की एक साजिश है जिसमें वर्ग-विशेष धर्म का गलत प्रयोग कर रहा है। चूँकि मैं उसी सैय्यदों में से हूँ जो अपनी पहचान किसी मर्द से न बनाकर 'बीबी सैय्यदा'से जोड़ता है तो मुझे कहने का साहस जुटाना होगा कि उन सारे शरीयत कानूनों को, जो औरत को बराबरी का दर्जा देते हैं, नकार कर या फिर तोड़-मरोड़कर पेश करने वाले

वास्तव में धर्म के दोस्त हैं या दुश्मन १ इंसानियत के हामी हैं या बर्बरियत के ? यह औरत को स्वतंत्रता देना चाहते हैं या कैदखाना ? मेरे लिए शताब्दी के अन्त में, जिसे मैं 'औरत की अर्धशताब्दी नाम दे सकती हूँ, खड़े होकर यह सवाल करना बहुत जरूरी लगता है कि-चौदह सौ वर्ष पहले औरत को देखने का खुला नजरिया हजार नकाबों से क्यों ढक दिया गया है जब इन्सान एक लम्बा सफर पूरा कर अनेक उपलब्धियों से भरा अंजाम देख रहा है ?"[123]

ख़ुदा की वापसी-

संग्रह की शीर्ष कहानी 'ख़ुदा की वापसी' है। इसे संग्रह की पहली कहानी होने का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ है। किन्तु नारी की मुक्ति सौभाग्य से नहीं संघर्ष से प्राप्त होती है। अत: कथा-नायिका आलोच्य कहानी में भाग्य को पीछे छोड़कर कर्म को महत्व देती है और चुनती है वह दुनिया जहाँ उसकी निजी जिंदगी में भले दुःखों का पहाड़ तोड़ दिया हो किन्तु नारी-मुक्ति उसकी स्वतंत्रता एवं स्वाभिमान की रक्षा का पहला एवं बहुआयामी पहल कहा जा सकता है। स्त्री की शिक्षा और आर्थिक स्वतंत्रता से नारी की पहचान बन सकती है। इसी कशमकश में कथा-नायिका 'फरजाना' उच्च शिक्षा ग्रहण करती है तभी माँ-बाप की पसंद से उसे विवाह का प्रस्ताव मिलता है जिसे स्वीकार करना फरजाना की मजबूरी रहती है। माँ-बाप एवं रिश्तेदारों का प्यार भरा मनुहार वह ठुकरा न सकी। शादी के लिए राजी हो जाती है किन्तु घर में सभी लोग 'मेहर' की रकम पर बात-चीत करते हैं, उसकी शिक्षा वगैरह को नजर-अंदाज कर देते है। कारण की 'मेहर' वह अमानत है जिसके दम पर औरत का आने वाला भविष्य सुरक्षित रहता है। फरजाना इसके उलट भिन्नाकर कहती है "सबको रकम की पड़ी है। मेहर कितना बंधेगा बरी में कितने जोड़े, जेवर, शक्कर और मेवे के कितने घड़े आएगें मगर कोई नहीं पूंछता कि क्या मुझे आगे पढ़ने देंगे ? युनिवर्सिटी जाने

देंगें ? आई. ए. एस के मुकाबले में बैठने देंगें ? उसका क्रोध आँसू की शक्ल में बहने लगा।"[124]

'मिस फरजाना, 'मिसेस जुबैर' बन गई। मुस्लिम धर्म में यह नियम है कि शादी की पहली रात को ही 'मेहर' की बाँधी गई रकम पुरुष अदा करे फिर औरत की इजाजत से उसके जिस्म को छू सकता है। मेहर अदायगी एवं औरत से इजाजत मांगना पुरुष का धर्म समझा जाता है और यही दोनों रसम औरत के हक एवं अधिकार को पुख्ता करता है किन्तु औरत से इजाजत मांगना पुरुष अपनी तौहीन समझ बैठा इसलिए धर्मग्रथों को तोड़ मरोड़कर, सच को झूठ और झूठ को सच बताकर अपना वर्चस्व कायम करना चाहा उसी का परिणाम है कि वह इस दुनिया का ख़ुदा बन बैठा। औरतें उनकी चाल में फँसती गई न धर्म-ग्रंथ पढे न पति का विरोध किया अत: 'मेहर-माफी' की शिकार हो गई और उनका भविष्य अंधकार के गर्त में धँसता चला गया। 'जुबैर' भी शादी की पहली रात (फरजाना' के सामने प्रस्ताव रखता है "देखिए, अगर आप मेहर के रुपए चाहती हैं तो मुझे कोई एतराज नहीं है, हम बिजनेस क्लास वाले हैं। चेक अभी काटकर आपके हवाले कर सकता हूँ, मगर बात कुछ और है। वह औरत शौहर के लिए बहुत मुबारक होती है जो पहली रात अपने शौहर का मेहर माफ कर दे। वह बड़ी पाकदामन समझी जाती हैं।"[125]

जुबैर मेहर माफ कराने हेतु झूठ का सहारा लेता है और उसका माध्यम बनाते हुए कहता है कि मैने मजहब की सभी कानूनी किताबों को पढ़ा है, मौलवियों से बातें की है। आप यकीन कीजिए, तब-तक आपके शरीर को टच नहीं करूँगा । जब-तक आप फैसला नही कर लेती है मैं उन जाहिल मर्दों में से नहीं हूँ। आप मेरी हैं। इसलिए मुझे विश्वास है, सब्र है, मैं इंतजार कर सकता हूँ, मगर जो कदम उठाऊंगा, कानून और मजहब की नजर से, हद को कभी पार नही करूँगा।

फरजाना को जैसे चक्कर आ गया। मोहब्बत और मेहर के बीच पहली रात को उसे किसी एक को चुनना था। दिल ही दिल में वह सोचती है "मेहर माफ नहीं करती हूँ, तो पहले ही दिन सब हार बैठती हूँ। कोई दावा, कोई जोर, कुछ भी.... करती हूँ, तो मोहब्बत से हाथ धोती हूँ, जिन्दगी भर इल्जाम ढोती हूँ कि मुझे रुपयों से प्यार था।"[126]

'फरजाना' उस वक्त मेहर माफ कर देती है किन्तु यह कशक उसको हमेशा रहता है कि अब वह खाली हाथ हो गई है। उसके उदास चेहरे से घर वाले परेशान रहते हैं। माँ-बाप, रिश्तेदार अनुमान लगाते हैं कि शायद ससुराल में सुखी नहीं है किन्तु दामाद के चहकते लहजे से तसल्ली हो जाती थी कि सब-कुछ ठीक है। फरजाना अपने भाई से मेहर माफ़ी की घटना बताती है और वे दोनो मौलवी से इसके बारे में पूछ-तांछ करते है जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि 'जुबैर' ने 'फरजाना' को धोखे में रखकर उसके विश्वास का गला घोंटा है। 'मेहर' मांफ़ी की झूठी दलीलें करवाना के अन्दर ज्वालामुखी बन फटने लगे किन्तु बाहर से वह शान्त बने रहने की कोशिश करती थी, मगर उसका संताप कम नही होता था। वह सोचती है- "उसकी शादी आधी कानूनी और आधी गैरकानूनी है। जब कभी जुबैर के हाथ उसके करीब आते, उसे महसूस होता कि उसके साथ बलात्कार हो रहा है। वह कभी-कभी अन्दर से इतनी हिंसक हो उठती कि लगता, कहीं कुछ कर न बैठे। अपनी चालाकी से उसने औरत को पहले निहली बनाया, फिर उससे प्रेम किया, मगर मै इस फाँस की तपकन को खत्म करके रहूंगी, उसी चालाकी और कूटनीति से, जैसे जुबैर ने मुझे पहली रात छला था यह खामोश लड़ाई तब तक चलेगी, जब तक मेरी जीत नहीं होगी ।"[127]

फरजाना इस्लाम धर्म के नियम कानून से वाकिफ थी इसलिए वह जल्दबाजी नहीं करना चाहती है। कारण कि यदि वह जुबैर का एकदम विरोध कर बैठे तो वह दूसरी शादी करके उसे भी धर्म का नाम देव बैठेगा। शीत युध्ध जारी था। एक तरफ

स्त्री अपने स्त्रीत्व को लेकर चौकन्नी है तो, दूसरी तरफ बोझिल ही सही पूर्व की अदायगी में व्यस्त भी है। गर्मी से फरजाना का बुरा हाल रहता है जुबैर उसी दिन घर में ए०सी॰ लगवाकर उसे लम्बी ड्राइव पर ले जाता है। फरजान कुछ समय के लिए पिघलने लगती है कारण की जुबैर अपनी मोहब्बत से उसे आकर्षित करता है। आलम्बन और उद्दीपन दोनों का संयोग, ठण्डी ए. सी. की हवा और रात ने एक-दूसरे के पास जाने को बाध्य कर दिया।

"रात की नीली रोशनी से भरा कमरा एक बर्फीली सरसराती ठण्ड में डूबा, रजनीगंधा की महक से गमक रहा था। जुबैर के चेहरे पर एक अलग तरह का आकषर्ण फरजाना को अपनी तरफ खींच रहा था।"[128] किन्तु फरजाना आधीरकानूनी शादी की बात और मेहर माफ़ी की घटना को लेकर सावधान हो जाती है। वह स्वयं से प्रश्न करती है कि "कितना अजीब है सब-कुछ ? एक तरक संबंध मोहब्बत की पुख्ता जमीन पर खड़ा हो रहा है, तो दूसरी तरफ आत्म-सम्मान, तर्क की छेनी-हथोड़े से संवेदना पर प्रहार कर उसे व्यथा के समन्दर में धकेल रहा है। दिल कह रहा है कि आज की खूबसूरती जी लो, प्यार दोनो हाथों की अंजुली में भरकर पी लो, न जुबैर को निराश करो, न खुद को दुःखी, मगर चेतना उसे रोक रही है भावना में मत बहो, ऐसी हजार हसीन रातें आएँगी, जरा इंन्तार करो। आज के सुख के लिए कल का समझौता बहुत महँगा पड़ेगा, जहाँ दर्द के गलियारों में भटकन होगी। एबादत का सूरज बीच में ही डूब जाएगा। सारी रातें सियाह पड़ जाएँगी ।"[129]

अन्ततः फरजाना चेतना की बात मानती है और नित्यप्रति किसी बहाने से जुबैर से बचने की कोशिश करने लगी। घर के काम के बाद वह किताबों में बिजी रहती। जुबैर को मामला समझ में आने लगा था इसलिए वह पूछता है "यह तुम हरदम किताबों में डूबी क्या तलाश करती रहती हो ? जवाब में वह कहती है आप को। आपने पहली मुलाकात में बताया था कि आपने बहुत पढ़ रखा है, मजहब के बारे में

काफी इल्म है आपको, तभी से मैंने काफी मजहबी किताबें पढ़ी किन्तु किसी हदीस, किसी सुन्ना में मेहर को पहली रात औरत से माफ कराने की बात नहीं मिली

औरत के हक और उसके निजी अधिकारों से जुड़े प्रश्नों को लेकर फरवाना संवेदनशील हो उठी। जुबैर के पास उसका कोई तार्किक जवाब नहीं था वह इतना ही कह सका कि "पहली रात ही अपनी बात मनवाकर जिन्दगी शुरू करने का मतलब था, हमेशा नकेल मेरे हाँथ होगी, वरना फिर तुम मुझपर धौंस जमाओगी ।"[130] 'फरजाना' का दर्द भरा किन्तु तल्ख तेवर फैसले के अंदाज मे बोल उठा-

"देखो जुबैर, मैं रोज तुम्हारे साथ मरती हूँ। मुझे डर है कि कहीं मै पागल न हो जाऊँ। मुझे पहली रात की वह शर्त, तुम्हारी वे बातें, सदा कोंचती रहती हैं। लाख भूलने की कोशिश करूँ, तो भी भूल नहीं पाती। शायद इसलिए कि वह धार्मिक दृष्टि से गलत था, झूठ था- हमारे प्यार की बुनियाद एक झूठ पर, एक फरेब पर शुरू हुई थी। वह दर्द इसकी कसक मुझे तड़पाती है मेरा दर्द समझने की कोशिश करो.... वह दर्द लाख या करोड़ के जेवर पहनने से खत्म नही होगा।"[131] वह कहता है कि तुम पागल हो रही हो फरजाना, मैं तुमसे बेइन्तहा मोहब्बत करता हूँ। मगर कथा नायिका दोबारा पुरुष के झाँसे में आना नही चाहती वह कहती है "मगर मै मोहब्बत करना चाहूँ भी, तो नहीं कर पाती हूँ। हरदम उस रात की बातें मुझे हथौड़े की तरह पीटती हैं, मुझे बताती हैं कि तुमने मेरी मजबूरी, मेरी मासूमियत का फायदा उठाया है।"[132] बस करो फरजाना मैंने यह सब सोचकर कर नही किया था। वह अपनी गलती मानते हुए कहता है कि मर्दाना नशा था, ताकत का, घमण्ड का, उसी नरो में उससे गलती हो गई। इसके बदल जो सजा चाहो दे दो किन्तु छोड़कर मत जाओ। 'फरजाना' मुखर हो बोल पड़ी- "फिर एक नया जाल मोहब्बत के नाम पर बन रहे हो ? पछता रहे हो, तो प्रायश्चित भी करना जानते होगे। मै तो अपने को सजा दे रही हूँ-अपनी हिमाकत की..... यह कोख हमेशा सूनी रखूँगी, उस मर्द का बच्चा हरगिज कोख में नहीं पलने

दूँगी, जो मोहब्बत के नाम पर सत्ता का परचम लहराये, जो औरत के अधिकार को अपनी चालाकी से ले और उसे निहत्था बनाकर अपनी जीती जमीन का एलान करे.... वह जमीन अंकुर नहीं फोड़ेगी, कभी नहीं ।"[132]

नारी को अपने पक्ष में निर्णय लेने का इतना मजबूत और सधा हुआ लहजा अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलता है। जब सब कुछ सही हो पति का लाड़ एवं सम्मान मिल रहा हो, सास-ससुर का मनुहार हो फिर एक कमी या गलती के कारण भरा-पूरा परिवार को तोड़ना उसे सबक सिखाना कहां की बुद्धिमानी है। लेखिका ने शायद फरजाना के माध्यम से अनेवाले कल की स्त्रियों को चौकन्ना करने का काम किया है। यह कहानी स्त्री संवेदना की रक्षा का एक ऐसा दस्तावेज है जो बिना समस्याओं के भी पुरुष को आड़े हाथों लेती है। जुबैर बार-बार कहता है कि तुम सब बर्बाद करने पर तुली हो। अपना गुस्सा ठण्डा रखो.... इन बातों से क्या फायदा कि मेहर माफी क्यों कराया। हम खुश है, खुश थे, खुश रहेंगे।

पितृ सत्ता का दोबारा जाल बुनने का मौका फरजाना नही देना चाहती है। वह कहती है "में खुश नहीं थी, एक बनावटी जिन्दगी जी रही थी, हौंसला जमा कर रही थी और आज में फैसला करना चाहती हूँ कि मुझे तुम्हारे साथ रहना है या अकेले जीना है।"[133]

पागल हो गयी हो क्या ? जुबैर तैश में आ गया।

"अब होश में आयी हूँ, नींद से जागी हूँ। "मुझे समझौते भरी यह जिन्दगी पसंद नहीं, जहाँ ख़ुदा और रसूल का दिया हक भी मुझसे छीनकर जीने पर मजबूर किया जाए। कल का क्या भरोसा ! इस दलदली जमीन पर कौन-से घर की बुनियाद पड़ेगी ?"[134] शख्त तेवर और फैंसलानुमा वक्तव्य ने पुरुष के अहं को चकनाचूर कर दिया वह बोल उठा "मैं तुम्हें बहुत प्यार करता हूँ, तुम्हारी इज्जत करता हूँ, जुबैर ने प्यार से सराबोर हो उसका हाथ पकड़ना चाहा।"[135]

हृदय की हार और चेतना की जीत हुई। स्त्री अपने हक को लेकर इतनी सजग हो उठी की उसकी संवेदनाएँ सूख सी गई। वह हृदय-पक्ष की संवेदना का परित्याग कर बौद्धिक संवेदना के रथ पर आऊढ़ हो निर्णयात्म घोड़े दौड़ाने लगी। एक कुशल योद्धा की भाँति फरजाना अपनी तरफ आते जुबैर के हाथों के बाणों को तल्ख तेवर से रोका और कहा कि "मुझे हाथ मत लगाना... मैने इतना तनाव सहा है कि अब मे टूटकर बिखर जाऊँगी । अभी तक चुप थी, सहने की ताकत थी। आज जबान खुल गई है तो मेरे सब का पैमाना लबरेज हो चुका है। मुझे कुछ दिन आराम चाहिए, फैसले से पहले का सन्नाटा। मुझे मेरे घर छोड़ आओ । जब तक मै तुम्हें न बुलाऊँ, तुम मुझे लेने मत आना, अटैची बंद करते हुए फरजाना ने अन्तिम फैसला सुनाया ।"[136]

स्त्री का अपना कोई घर नही होता है। पति का घर छोड़ वह पिता के घर शरण लेती है। यदि मेहर की रकम होती तो वह अपना घर भी बना सकती थी। फरजाना का जिद, जुबैर का अहम रिश्ते के कसाव को ढीला कर दिया। यहाँ औरत के पक्ष में इतना ही परिणाम प्राप्त हुआ कि वह पहली बार समझौता करने पर मजबूर नहीं हुई बल्कि पुरुष सत्ता पलायनवादी रणनीति अपनाकर विदेश जाने पर बाध्य हुआ ।

दहलीज-

दहलीज प्रतीक है उन बेड़ियों की जो लिंग-भेद की विचाराधारा पर अवलम्बित है। यहाँ स्त्री के संवेदनाओं के दो रूप दृष्टिगोचर होते हैं। एक तरफ अत्याधुनिक शिक्षा से लबरेज सकीना, हुमैरा और शाहीन उच्च शिक्षा प्राप्ति की आकांक्षी एवं आजादी के साथ जीने की हिमायती हैं। तो दूसरी तरफ 'दादी' का अतीत, रूढ़िवादी मानसिकता से ग्रसित, बेटे और बेटी में जमीन-आसमान का अन्तर स्थापित करने पर आयादा ।

लेखिका दो पीढियों के बीच के अंर्तद्वंद्व को दिखाने की सफल कोशिश की है। प्रश्न गंभीर यह है कि दो पीढ़ियों के मानसिक अर्तद्रन्द्र तो समझ में आते हैं किन्तु दो पीढ़ी लिंग-भेद के आधार पर किसी को शिक्षा, व्यवसाय एवं स्वतंत्रता से जीने की व्यवस्था को, भंग करे तो निश्चित तौर पर यह समाज की कुप्रथा कहलायेगी। ऐसी ही नारी संवेदना संबंधी कुप्रथाओं पर कुठाराघात करती 'दहलीज' कहानी अपने पूरे अवयव के साथ स्त्री संवेदना का कुशल दस्तावेज सिध्ध हुई है।

'दहलीज' कहानी का प्रस्थानबिन्दु पिता('सामिन' के माली हालत से प्रारंभ होती है जिसके कारण बेटी 'सकीना' उच्च-शिक्षा में दाखिला नहीं ले पाती किन्तु 'पुत्र' 'जावेद' दादी का कृपापात्र है जो अपनी दिनचर्या फिजूल खर्ची में बिताता है। सकीना दादी की खुशामद करते हुए कहती है- "दादी मैं उन पर बोझ नही बनूँगी, ट्यूशन करके फीस का पैसा निकाल लूँगी। आप की बात अब्बू टालते नही ।"[137] किन्तु 'जावेद' का स्वर गूंजा यह काफी पढ़ चुकी है अब कितना पढ़ेगी ? जानती हैं दादी, बी०ए० की पढ़ाई के लिए बस में धक्के खाते कितनी दूर जाना पड़ता है। पोते की बात सुन दादी के दिल में रही-सही दया भावना भी छू मंतर हो गयी। वे कहती है- "अरे बन्नों, बँधी मुट्ठी लाख की, खुली तो राख की। चुपचाप घर में बैठकर माँ का सिलाई में हांथ बटाओ वरना 'आरिफ मियाँ की इज्जत पर राह चलते ढेले फिकेंगे निगोड़ा मोहल्ला भी कैसा है, नदीदों का जैसे औरत कभी देखी न हो, सर झुकाकर अपने काम से काम नही रखेंगे, पराई औरतों की ताक-झाँक में लगे रहेंगे... खुदा ने चाहा तो साल-छह महीने में तेरी डोली उठ जाएगी।"[138] तीनो बहनों में जितना ज्यादा प्रेम और अल्हड़पन था उतना ही ज्यादा वैमनष्य और अस्थिरता जावेद और बहनों के मध्य था। कारण कि जावेद कुण्ठा से ग्रसित एवं स्त्री के प्रति तानाशाही स्वभाव का था। वह बहनों पर रोब जमाता और हमेशा दादी की अदालत में खुद वकील बन बहनों को कटघरे में खड़ा करता था। इन सब के मध्य माँ इजहार गृहस्थी की चक्की में रात-दिन पिसती रहती

है। वह बेटियों की सिपहसलार है उनके प्रति ज्यादा संवेदनशील भी। इसीलिए अपनी सास से लड़कियों को बचाने की भरसक कोशिश करती रहती है। 'इजहार' की सास कहती है "दुल्हन तुमने भी बेटियों को सर चढा रखा है। याद रखो, नस्ल बेटों से चलती है, यह लड़कियाँ तो मुँडेर पर बैठी गौरैया हैं, अपने बंसेरे को उड़ जाएँगी, पलटकर नहीं आएंगी। बुरे वक्त का साथ लड़का होता है चाहे काना ही क्यों न हो।"[139] प्रति उत्तर में बड़े ही शालीनता से इजहार कहती है "इन्हें भी तो नही भूल सकती अम्मी, आखिर यह भी मेरे ही गोस्त-पोश्त से बनी है।"[140]

पिता 'सामिन' के अलावा पूरा परिवार एक शीत युद्ध लड़ रहा था। पढ़ाई बंद हो जाने से 'सकीना' बगावत का रुख अपना रही थी वह अपनी बहनों से कहती है कि अब बर्दाश्त नहीं होता लगता है की तीन जनाने अब इसी दहलीज से निकलेंगे। मँझली बहन कहती है डायलॉग्स मत मारो। हुमैरा सीरियस होकर बोलती है "यह डायलाग्स नही मेरा ऑब्जर्वेशन हैं..... जानती हूँ तुम इण्टर करके घर बैठने वाली हो.... एक साल बाद मेरी बारी होगी। यह बेइन्साफी हम क्यों सहें? आखिर हमारा भी तो कुछ हक है अपने माँ-बाप पर ?"[141]

माँ-'इजहार' बेटियों की स्वतंत्रता के खातिर संघर्षरत रहती हैं वह बेटियों को ट्यूशन या नौकरी की तलाश में बाहर भेज देती है किन्तु दादी को कानोकान खबर नही पड़ती है। एक दिन सास पूँछ बैठी "दुल्हन ! कई रोज से देख रही हूँ लड़कियाँ सरे शाम सोने लगती हैं यह कैसी मनहूसियत है ? जरा आवाज दो न ।"[142] "अरे अम्मीजान ! सोने दें, सुबह से उठकर झाड़ू- बर्तन, खाना पकाना, सिलाई में हाँथ बटाना.... 'बच्चियाँ हैं थककर-चूर हो जाती होंगी। जब तक बाप का घर है आराम कर लें फिर जहाँ इनकी किस्मत इन्हें ले जाएगी चली जाएँगी।"143 एक तरफ नई पीढ़ी की औरत तीनों बेटियों की माँ 'इजहार' बेटियों की स्वतंत्रता की पक्षघर है, तो, दूसरी तरफ सास की खुशी का भी पूरा ध्यान रखती है। बेटी और सास के मध्य सामंजस्य

स्थापित करने में वह झूठ का सहारा लेती है किन्तु भेद खुल जाता है। अचानक दरवाजा खुलता है और 'जावेद' के पीछे दो पोतियाँ घर में दाखिल होती है। सास का प्रश्न उठा तुमने तो कहाँ था लड़कियाँ ऊपर सो रही है ? जवाब में इजहार इतना ही कह पाई कि, भूल गई थी। इन्हें तो मैं कपड़ा देने 'सुल्ताना' के दादी के पास भेजा था। 'जावेद' का स्वर उभरता है वह कहता है- "झूठ ! अम्मी आप सरासर झूठ बोल रही हैं। मुझे सच पता चल गया है यह दोनो नौकरियां तलाश करती फिर रही है। दादा की इज्जत का टोकरा सर पर उठाए खान-दान के नाम को यहाँ-वहाँ बाँट रही थीं।"[144]

भाई के तानाशाही एवं मिर्च मशाला लगाकर दादी के सामने बात रखने के अंदाज का सकीना डटकर विरोध करती है। वह कहती है "देखो जावेद ! हम आज पहली बार तो घर से बाहर निकले नहीं हैं, रोज स्कूल, कॉलेज जाते रहे हैं। फिर आज कौन सी अनहोनी घट गयी जो तुम सीन क्रियेट कर रहे हो ?"[145]

बात क्या होगी ? जावेद ने कंधे उचकाये।

"बात है! मै बताती हूँ : तुम जिस कम्पनी में बैठकर लड़कियों को डिस्कस करते हो, नही चाहते हो कि तुम्हारी बहनों का कोई वहाँ नाम ले..... गिल्टी तुम हो, हम नही..... डबल स्टैण्डर्ड.... हिपोक्रेट ।"[146]

'सकीना' के तल्ख तेवर ने 'जावेद' और दादी के होश उड़ा दिए । औरत की स्वतंत्रता की पक्षघर किन्तु समय की नजाकत को भाँपते हुए 'इजहार' बेटियों को ऊपर भेज देती है। दादी भूँख हड़ताल पर बैठ जाती हैं । 'सामिन' के कहने पर वह खाना खाने उठती हैं किन्तु इस विश्वास के साथ कि जो भी उनका दिल दुखाया होगा उसे सजा मिलेगी। खाने के बाद बारी-बारी से पूछ-तांछ शुरू होती है तब सबसे पहले पुरानी पीढ़ी की प्रतीक दादी अपनी बात रखती हैं "दो-तीन दिन से मेरी नजर बचा

दोनो सर झाड़, मुँह फाड़ घर से निकल जाती हैं और जो पूँछों तो दुल्हन साफ सरियन झूठ बोलती है कि दोनो थककर ऊपर सो रही हैं।"[147]

सामिन बेटियों से पूछता है, तुम लोगों को कुछ कहना है-

"अब्बू, मै आगे पढ़ना चाहती थी मगर.... आपकी मजबूरी समझती हूँ इसलिए चाहती हूँ कि अपनी पढ़ाई का खर्च पार्ट टाईम जॉब से निकालूँ, आखिर इतना पढ़कर बेकार घर में बैठना अच्छा नहीं लगता है। फिर अच्छी नौकरी के लिए एम०ए० तो करना पड़ेगा। सकीना ने जान हथेली पर रख अदालत के कटघरे खड़े हो सारा सच उगल दिया।"[148]

पिता सामित पुत्री की बेबाक एवं राच्ची जबान के ईस्तेमाल से प्रसन्न हुए। कुछ और जानने की उमंग बढी । अपनी यह ख्वाहिश किसी से कही थी ? "हमारी जबानखुलते ही हमारी सोच पर रोक लग जाती है और इस डर से हमने असली बात दादी से कहना मुनासिब नही समझा मगर अम्मी को बताकर गये थे। शाहिन ने दादी की बड़ी-बड़ी आँखों की परवाह किये बगैर हकीकत कह दी।"[149]

मौके की नजाकत को समझते हुए दादी ने खामोश रहना ज्यादा मुनासिब समझा किन्तु मन-ही-मन अपना फैसला ले चुकी थी कि इस हार को जीत में कैसे बदलना है। दादी के इस कबड्डीनुमा खेल के वजह से दिन-प्रतिदिन भाई-बहनों के बीच फाँसला बढ़ता ही गया । जावेद को दादी रूपी ढाल मिला था जिससे वह शेर की तरह दहाड़ता । लड़कियाँ खामेश रहने लगी थी । अंततः सकीना की शादी हो जाती है। ससुराल से सकीना खत भेजती है और उसमें अपनी संवेदना एवं सिकन की छटपटाहट बयान करते हुए कहती है "आप लोगों ने दुनियाँ के डर से हमें नौकरी नहीं करने दी । दादा के शौक की वजह से स्कूली तालीम हमें जरूर मिली, मगर दादी की जिद ने हमें उसका फायदा नही उठाने दिया और हमारी शादी कर दी। अम्मी, यहाँ सलीके की इल्म की कदर नहीं है। बस घर में बैठी रहती हूँ। बात-बात पर पढ़ाई का

ताना मिलता है। अखबार, मैगजीन का आना इस घर में गुनाह है। मेरा दिल बहुत घबराता है.... मुझे लगता है कि मैं कभी भी घुटन से मर सकती हूँ।"[150]

बड़ी बहन के खत को दोबारा पड़ते हुए, आक्रोश से तमतमाती शाहीन कहती है कि "सोचती हूँ शादी से इन्कार कर दूँ.... घर आयी बारात को उलटे पैर वापस लौटवा दूँ ।" [151]

"वह जूते पड़ेगें सर पर कि तुम्हारे साथ हम भी बरसों याद रखेगें। फिर तुम्हारे सुसरालवालों के यहाँ जूतों की कमी है क्या ? हुमैरा बहन की बात पर हँस पड़ी । कल बारात आनेवाली है और यह बगावत के ख्वाब देख रही हैं, पिछले छह-सात महीनों में तो हम कुछ कर नही पाये, अब क्या खाक करेंगें ? जावेद भाई का वीजा आ गया है उन्हें पचास हजार चाहिए। दादी ने उनका वह शौक भी पूरा कर दिया, अगले माह वह जा रहे हैं। अब अकेली बचूँगी मैं अकेला चना क्या भाड़ भूनेगा।"[152]

शादी एवं मेहदी की रसम की तैयारियाँ चल रही थीं किन्तु शाहीन के मन में स्वतंत्रता से जीने का तूफान उठ रहा था। उसे स्वतंत्रता से जीने नही दिया गया इसलिए वह मौत को गले लगा लेती है। पूरा घर सकते में आ गया। घर में अब अकेली हुमैरा बची। एक बहन की मौत दूसरी की जलालत भरी जिन्दगी हुमैरा के नींद को उचाट देती थी। देर रात को वह माँ से लिपटकर कहती है "अम्मी या तो आप हमें पढ़ाती न या फिर यूँ कैद में न रखतीं। हम कहीं के नही रहे। न आप और दादी की तरह जी सके न अपनी साँस ले सके। इस कैदखाने की सलाखें मेरा दम घोंटती हैं। दिल चाहता है सारी जंजीरें तोड़ इतनी दूर तक भागती जाऊँ कि लौटना याद न रहे।"[153]

प्रारंभ से ही बेटियों की शिक्षा एवं औरत की स्वतंत्रता की पक्षघर 'इजहार' बेटी के माथे को चूमते हुए कहती हैं "घर की दहलीज पार करना और बाहर की दुनियाँ में

कदम रखना आसान काम नही है । घर के अन्दर की घुटन जानी-पहचानी होती है मगर बाहर का परायापन एकदम अजनबी । मुझे यकीन है तुम परायी दुनियाँ को भी अपनी बना लोगी। अब इस घर में तुम्हे कोई नहीं रोकेगा ।"[154]

हुमैरा 'डॉ सहगल' के क्लीनिक में रिसेप्शनिस्ट की नौकरी करना शुरु कर देती है। घर का तनाव भी धीरे-धीरे कम होने लगा। आर्थिक स्वतंत्रता ने दादी के विचार को भी बदल दिया। वे खुद घर में काम करने वाली औरतों, मजदूरों को बुखार, सरदर्द की दवा देते हुए बोल पड़ती थीं कि "अब तो हुमैरा आधी डॉक्टरनी हो गई है, जब चाहो जाकर दिखा जाना। फिर जोर से हँसकर कहती, आखिर पोती किसकी है, आरिफ मियाँ साहिबे किताब की ।"[155]

दादी का हृदय परिवर्तन और पोती की प्रशंसा का सिलसिला तब से प्रारंभ हुआ था जब से बोसीदा कदमचे तुड़वाकर फिर से बनवाए गये। दहलीज के चौखट की सड़ी-गली लकड़ी की जगह नयी लकड़ी बदल दी गई। समय बदला तो हालात बदल गये। हालात के बदलने से लोगों के विचारों में तब्दीली आई किन्तु औरत के पक्ष का निर्णय एक बार फिर बूढ़ा अतीत बनने की कोशिश करता है।

लेखिका अतीत को झटका दिलाने हेतु एक बार फिर से दादी के माध्यम से नारी की स्वतंत्रता को आच्छादित करने की कोशिश करती है। दादी का कथन है- "लड़की कमाने भी लगी है। ...पक्की उम्र की दुल्हनों के चेहरों पर नूर नहीं उतरता। मेरी मानो तो बस बहुत हो गया नौकरी का शौक। अब उठाकर हाथ पीले कर दो।"156 बेटे-बहू दादी के तमाम सवालों को सुन चुप रह जाते थे। जैसे एक मौन से सैकड़ों मुशीबतों से निपटारा मिल रहा हो। दादी की यह हालत देखकर रिशेप्शनिष्ट हुमैरा मन-ही-मन में कहकहे लगाकर कहती ; "कैद और आजादी के बीच अकलमन्द आजादी को चुनेगा दादी जान ! आपकी फेंकी कमन्द से दूर मुझे वहाँ तक जाना है जहाँ आसमान और जमीन मिलते हैं।"[157]

दूसरा कबूतर-

'ख़ुदा की वापसी' कहानी संग्रह की यह कहानी (दूसरा कबूतर) औरत की वेदना और संवेदना के त्रिकोणीय संबंध को रूपायित करती है। इस कहानी का कैनवास बहुत कुछ मन्नू-भण्डारी की कहानी 'यही सच है' की विषयवस्तु से प्रभावित जान पड़ती है किन्तु केवल भावात्मक धरातल पर/व्यावहारीक एवं सौद्देशीय स्तर पर नासिरा शर्मा की यह कहानी 'यही सच है' से काफी सफल एवं बौद्धिक वर्ग की संवेदना से अनुप्राणित जान पड़ती है। कहानी का प्रस्थानबिन्दु बेहतर जिन्दगी की लालसा में लालायित एक ऐसी नायिका के जीवन से प्रारंभ होती है जो अपने पिता के कहने पर किसी अनजान एन. आर. आई से निकाह कर लेती है जो दौलतमंद होता है। दौलत, शोहरत एवं आभूषणों की भरमार ने नायिका 'सादिया' को अल्हड़ बना देता है। 'शादिया' जब दिल्ली से दोबारा अपने ससुराल जाती है तो उसकी मुलाकात 'रुकइया' से होती है जो 'बरकत' की पहली बीबी और तीन बच्चों की माँ भी होती है। सादिया के सपनों का महल ढह जाता है। वह सोचती है कि बरकत ने उसके साथ ऐसा क्यों किया जब उसकी शादी पहले ही हुई थी तो उसकी जिन्दगी क्यों तबाह किया ।

दूसरी तरफ 'रुकइया'; सादिया से कहती है "उन्होंने मेरे बच्चों का मुस्तकबिल तारीक बनाया । मेरी मरजी और मुझे बताए बिना उन्होंने शादी की। उन्हें दूसरी शादी की जरूरत क्यों पड़ी जबकि न मे पागल है न बाँझ हूँ। न जेल गयी न घर में से शहर से सालों गायब नही या मैं बीबी के करायज नही पूरा कर पायी।"158

इस कहानी की नारी पात्र रुकइया एवं सादिया दोनो जेहनी तौर पर पुरुष के अहं और दौलतमंदी के नशे का शिकार होती है। कहानी का पुरुष पात्र बरकत उर्फ शहाब, कभी बरकत बन सादिया को छला तो कभी शहाब बन रुकइया को बेवकूफ बनाया। चूँकि रुकइया तीन बच्चों की माँ थी ढाल अतः शहाब से तलाक लेना मुनासिब नही समझती कारण कि 'सउदी अरब' जैसे मुल्क में "किससे शहाब का रोना

रोया जाय? यहाँ तो सभी अहमाम में नंगे हैं। जंगल का कानून है। किसी की तीन तो किसी की चार बिवीयाँ और लाताद बच्चे हैं। उन्हें चार बीवियाँ रखने की एजाजत किन हालात और शर्तों पर दी गई है। उसका उन्हें इल्म नहीं है। मर्दों को कोई सुधार पाया है जो मैं मर्दों के बनाए रिवाजों के बीच अपना हक माँगने जाऊँगी ? पाकिस्तानी कोर्ट शहाब को कोई सजा नहीं देगा बल्कि मुझे ही कायल किया जाएगा और मैं उनसे बहस नहीं कर पाऊँगी कि जो कुछ शहाब ने किया वह दरअसल शरीयत और सुन्ना के खिलाफ है।"[159] रुकइया की स्थिति बड़ी असमंजस भरी है। नारी धर्म और पति, पुत्र का स्नेह उसे साँप और छछुन्दर की दशा में पहुँचा देता है। 'गोस्वामी तुलसी दास' माता कौशल्या की दशा का चित्रण करते हुए राम के वन गमन पर लिखते है "धरम सनेह उभय गति घेरी, भई गति साँप छछुन्दर केरी" इसी दशा का चित्रण लेखिका रुकइया के रूप में करती हैं। दूसरी तरफ सादिया उन दोनों के मध्य संबंध को लेकर उसकी अंतरंगता को लेकर विशेष आहत होती है। वह सोचती हे "इन दस सालों में इन दोनों ने अपने को कदम-कदम पर बाँटा होगा - कभी मर्द औरत होकर, कभी पति-पत्नी बनकर तो कभी माँ-बाप बनकर, फिर बरकत के पास मेरे लिए बचा क्या होगा ? जो बच गया है वह सिर्फ तलछट है। शहबत है। ऊब है। नया कुछ पाने की चाह है। एक सादी जिन्दगी के इतमीनान भरे सन्नाटे में हलचल लाने की तमन्ना भर है। वह मर्द को सुख देने का सिर्फ जरिया भर है। नहीं, नहीं मे अब इतनी बेइज्जती नही बर्दाश्त कर पाऊँगी, कभी नहीं... मैं वापस जाऊँगी फिर कभी न लौटने के लिए.... मैने घर चाहा था, शौहर चाहा था मगर यहाँ तो कुछ भी अपना नहीं है।"[160]

गलती 'शहाब' उर्फ बरकत मियाँ की है किन्तु सजा दो औरतें झेल रही हैं। लड़ाई का माहौल भी रुकइया और सादिया के मध्य बना हुआ है। रुकइया समय की नज़ाकत को समझते हुए कहती है- "मैं आप से बड़ी हूँ... शायद पन्द्रह या दस साल,

मैं आपसे ज्यादा मर्द की कमजोरी और मजबूती को जानती हूँ। इस वक्त हम दोनों ही नार्मल नहीं हैं। दिमागी और जज्बाती सदमें से गुजर रही हैं। सब कुछ इतनी जल्दी करना ठीक नहीं।"[161] दिल्ली वापस होने के लिये पैकिंग करते हुए सादिया के हाथ थम जाते हैं, वह पूछती है कि, आप चाहती क्या है ? रुकइया जवाब देती है

"हम एक दूसरे के खिलाफ न खड़े होकर एक दूसरे के साथ खड़े हो सकते हैं। तब हम एक अकेले नही बल्कि गिनती में ग्यारह होगें। अपनी जिन्दगी की उलझन को एक दूसरे की मदद से सुलझा लेंगें।"[162] सादिया को रुकइया का इशारा सही नही लगा वह अपने हक को एक छत के नीचे रहकर किसी और में बाँटने की पक्षघर नहीं है। रुकइया ; सादिया को समझाती है जिसमें औरत की संवेदना का एक तीसरा ही रूप स्पष्ट होता है । वह खुद को बेबस और सादिया को दुःखीनी बाला समझ सात्वना भरे लहजे में कहती है "शहाब बुरा शौहर नहीं है। न हमारे लिए न तुम्हारे लिए । वह औरत को बुनियादी खुशी दे सकता है-बिस्तर पर राहत, घर में आरामदेह जिन्दगी, पर्स में खर्च के लिए पैसे, बुढ़ापे की लाठी की शक्ल में औलादें, मगर... औरत को अपने को अकेला देने के हक में नहीं है। उसकी वफादारी का पैमाना हमसे अलग है। हमको अब तय करना होगा कि हम आया शौहर भी लें या वह भी नहीं। मोहब्बत निभाएँ या इंसानियत । मजहब को माने या बेईमानी को नकारें ? अब सारे फैसले हमें करने हैं जो मुश्किल तो है मगर नामुमकिन नहीं।"[163]

सादिया का बालपन कभी अपने खिलौने दूसरों से साझा नही किया था यहाँ तो शौहर बाँटने की बात हो रही है, जो उसे हरगिज स्वीकार नहीं। रुकइया भी उसी अंदाज में कहती है कि मै अपना सुहाग चाहूँ भी तो तुम्हें पूरा नहीं लौटा सकती, क्योंकि मेरे वजूद के यह हिस्से हमेशा मेरे शहाब से जुड़े रहेगें। 'सादिया' उसी बेपरवाही में कहती है "जानती हूँ आप लोग पूरे पाँच हैं ।बंध गयीं पाँचों ऊँगलियाँ तो मुट्ठी। खुल गयी तो पंजा। हर उँगली अलग रहकर भी एक है। और मैं न हंथेली बन

सकती हूँ न कलाई, बल्कि हथेली पर रखी बाहर से लायी कोई चीज जैसी मेरी हैसियत होगी - यह मैं महसूस कर रही हूँ जो मुझे मंजूर न होगा ।"[164]

फिर करोगी क्या ? रुकइया ने तड़पकर पुछा-

सादिया का दर्द, उसकी पीड़ा औरत की जैवकीय ढाँचे की कमजोरी के लिहाफ में फफक पड़ा। वह अपने साथ हुए धोखे से तलाक ले हर्जाना भी पा सकती थी किन्तु उसके अछूतेपन को न कोई कोर्ट न शरीयत कानून ही लौटा सकता है। उसकी मनःस्थिति को देख रुकइया औरत के पक्ष में निर्णायक मुद्रा में खड़ी होती है, वह कहती हैं " हम दोनों के बीच लम्बा फासला है।

"मैं तुममें शहाब का भविष्य देख रही हूँ और तुम मुझमें बरकत का अतीत। न मैं माफ कर सकती हूँ न तुम। मगर इस मौजूदा वक्त का क्या करें जिसमें हम फंसे खड़े हैं जो हमारा वर्तमान है।"[165]

औरत मर्द के मुद्दे को लेकर सादिया और बरकत में काफी वाद-विवाद होता है। बरकत अपनी दलीलें देता है, वह कहता है कि एक औरत होकर तुम दूसरी औरत के साथ एक अपनेपन का रिश्ता नहीं निभा सकती ? जवाब में सादिया कहती है-"तुम क्या मेरे बॉय फ्रेंड के साथ एक कमरे में रहना पसंद कर पाओगे... क्या मैं दो शादियाँ कर सकती हूँ ?"[166]

बरकत सादिया से कहता है-

तुम पढ़ी-लिखी लड़कियों में सारी खूबियों के बावजूद यही बहुत बड़ी कमी होती है कि एक तरफ जितनी खुली होती हैं दूसरी तरफ उतनी ही तंगनजर। नही जानती कि मरद औरत अपनी जरूरत, मिजाज और सोच में कितने अलग-अलग होते हैं औरत एक से मुतमईन हो सकती है मगर मर्द नहीं ।"[167]

बेवफाई का इतना संगीन अपराध करके भी मर्द इतना ढिंठ और निर्लज्ज हो सकता है इसका इल्म सादिया को न था। वह कहती है "कुछ मर्द आदतों में औरत

और कुछ खसलत में मर्द होती हैं। समझ लो मै मर्द हूँ। गैरतदार, हाकिमाना, तेवर और खुदगर्ज जो अपने शौहर को किसी और के साथ देखना बर्दाश्त नहीं कर सकती है और तीन बार तलाक तलाक तलाक कह सकती है।"168

बहुपत्नीवाद की समस्या को औरत की निजी समस्या के रुप में रूपायित करने वाली यह कहानी (दुसरा कबूतर) पुरुष के दोमुँहेपन को प्रदर्शित करती है। किसी भी समाज में रिश्तों की विपन्नता का कारण पुरुष की जरूरत से ज्यादा आर्थिक संपन्नता होती है। आर्थिक संपन्नता ही शहाब एवंबरकत मियाँ को दो औरतों की संवेदनाओं से खेलने का साधन मुहय्या कराती है अत: दोनों औरतों ने यह ठान लिया कि बरकत को तलाक देकर उसकी संपत्ति का आपस में बाँटवारा कर लिया जाय। जिस संपत्ति के मद में वह इन दोनों को छला था उसी संपत्ति का हरण होना जरूरी है। रुकइया सादिया से कहती है "तलाक देकर शहाब की आधी-आधी जायदाद हम बाँटकर अपनी बेइज्जती का सबक उसे सिखा सकते हैं। दौलत है उसी पर तो सारी इतराहट है। फिर तो बचेगी सिर्फ तनख्वाह और जमा होगी बूँद-बूँदकर जमापूँजी... भूल जाएँगे मियाँ तीसरा इश्क और शादी ।"[169] पहली बार सादिया को रुकइया के चेहरे पर शहाब के लिए नफरत दिखायी पड़ी। उसे बड़ा सुकुन मिला।

कहानी का अन्त न सुखान्त होता है न दुखान्त बल्कि स्त्री मुक्ति के प्रसाद से और पुरुष के अपराध की वाजिब सजा से होता है। भारतीय परंपरा में एक उक्ति प्रचलित है 'वध से भला त्याग' अत: दोनो औरतें शहाब को तलाक दे देती हैं । शहाब की बेटियाँ कराँची में पढ़ने लगीं। कोर्ट ने महीने में एक बार बच्चों से मिलने की इजाजत शहाब को प्रदान किया ।

शहाब रुकइया और बच्चों के बगैर उस घर में घुट ही रहा था कि अचानक डाक से उसे सादिया के विवाह का कार्ड मिला। पहला कबूतर (शान्ति) शहाब के हाथ से रुकइया और बच्चों के रूप में पहले ही उड़ गया था किन्तु दूसरे कबूतर अर्थात

'सादिया' के लौट आने की आशा उसे थी किन्तु शादी का कार्ड - पाकर बरकत को लगा कि उसके गाल पर दूसरा झन्नाटेदार : चाँटा पड़ा है और उसके हाथों में दबा कबूतर छूटकर खुले आसमान में पहले कबूतर के पीछे उड़ गया है।

बचाव:- नासिरा शर्मा के इस कहानी संग्रह (ख़ुदा की वापसी) के कुछ अन्य कहानियों में भी संवेदना के छिट-पुट रूप दिखाई पड़ते हैं, जैसे की 'बचाव' कहानी में विधवा स्त्री एवं उसके बच्चों का गृह त्याग, पुर्नविवाह एवं ममत्व के दर्द की स्थापना का चित्र देखने को मिलता है। कहानी की नायिका 'बदली' का विवाह अशरफ से होता है। अल्प समय में ही अशरक की मृत्यु हो जाती है अत: अशरफ के भाईयों ने उसे घर से बाहर निकाल दिया/बदली का भाई काजिम न केवल अपनी बहन को उसकी सम्पत्ति दिलवाता है बल्कि मुकदमा लड़ रहे वकील के विधुर भाई से उसकी शादी भी कराता है। बदली की बेरंग जिन्दगी में एक नये मेहमान के प्रवेश से जहाँ खुशहाली आती है वहीं उसको यह जानकर निराशा भी होती है कि उसके दूसरे बच्चों की देख-रेख उसके भाई के यहाँ ही होता रहे। वह अपने मायके पहुँच जाती है और भाभी रेहाना से कहती है-

"भाभी ! यह सही है कि जीने के लिए मुझे बच्चों का हक चाहिए था। मेरे लिए अच्छा समझकर तुमने मुझे ब्याह दिया। कल तक मैं अशरफ की ब्याहता और बेवा थी, आज आरिफ़ के नाम का सुहाग मेरे माँग में अफशाँ और सन्दल बन चमक रहा है। उसकी औलाद से गोद भी भर गयी है।"[170]

रेहाना ननद को झप्पी देते हुए कहती है- चल पगली यह तो हमारी जवाबदेही थी। "जानती हूँ तुम मुझे और गोली, चीकू को बहुत प्यार करती हो ...मगर भाभी, अब तुम इन दोनों के लिए अपने दरवाजे बंद रखोगी, यही कहने मैं आई थी।"[171] यानी ? रेहाना नें सकपकाकर पूँछा-

बदली उसी ममत्व में कहती चली गयी कि "मैं नही चाहती कि हक-हिस्से की तलवार मेरी ममता को दो फाँक कर दें ।"[172]

नासिरा शर्मा ने औरत को इस कहानी में वहाँ ज्यादा मुखर बनाया है जहाँ बात उसके औलाद की आती हो। अपने मामले में बदली थोड़ी भीरू व्यक्तित्व की नारी है किन्तु ममता और औलाद के मामले में वह अत्यन्त संवेदनशील जान पड़ती है। ख़ुदा की वापसी कहानी संग्रह के । 'निवेदन' में लेखिका खुद आशंकित है। इस संग्रह की अतिशय संवेदनशील कैनवास से वह लिखती है - "कहानी 'ख़ुदा की वापसी' लिखते हुए मुझे - कई तरह के खौफ ने घेर रखा था। जब हर तरफ धर्म का प्रचार किया जा रहा हो, उस समय मेरी यह कहानी कहीं उसी का गान समझ ली जाए और उसमें छिपी जिन्दगी की पीड़ा पाठकों के मन को छू न सके, इस खौफ के बावजूद मैं खतरा लेने को तैयार थी।"[173]

संग्रह के संबंध में लेखिका आगे लिखती है कि - "दूसरा खतरा मुझे उन कठमुल्ला सियासतदानों से था जो सच की परदा कुशाई से भड़ककर कोई फतवा न दे बैठें। इसलिए मैने 'ख़ुदा की वापसी' के दोनों मौलवी किरदारों को बिलकुल उसी तरह पेश किया जैसे कि वे हैं।"[174] तमाम संकटों के बावजूद भी इस संग्रह में जहाँ-जहाँ नारी संवेदना के चित्र उभरे हैं उसे लेखिका ने व्यवस्थित आयामों में प्रतिष्ठित किया है।

गूँगा आसमान कहानी संग्रह में स्त्री संवेदना

गूँगा आसमान संग्रह एक दर्जन कहानियों का पुंज है। इसका प्रकाशन वर्ष ई० सन् 1999 है। इस संग्रह की 'कथा शैली' से प्रभावित होकर 'उपेन्द्रनाथ अश्क' ने नासिरा शर्मा के कथा-कौशल की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते हुए लिखते हैं- "नासिरा शर्मा में कथा कहने की जन्मजात प्रतिभा दिखाई देती है। उनके पास अनुभवों की कोई कमी

नहीं है। अनुभूतियों का भण्डार है। अपने पात्रों का गहरा विश्लेषण करने की क्षमता है। शैली बहुत राँवा-दवाँ, भाषा सरल, सुलभ, प्रवहमान है। उसमें काव्य का रस है।"[175]

कथानक के सुसंगठन एवं अपरोक्ष विषयवस्तु को संकेत मात्र से व्याख्यायित करने की जो विशिष्ट प्रतिभा नासिरा शर्मा में है, वहीं कवि-कर्म का व्यवस्थित संगुम्फन उनके कहानी 'संग्रह'गूँगा आसमान में लक्षित हुआ है।

श्रवण कुमार लिखते हैं-

"बहुत कम लेखक ऐसे होते हैं जिनकी आँख बारीक रेशे को पकड़ती हैं, जिनके कान महीन से महीन आवाज को सुनते हैं बौर नाक हल्की गंध को ग्रहण करती हैं। ऐसे लेखकों को हम सहस्राक्षी लेखक ले भी कह सकते हैं। नासिरा शर्मा एक ऐसी ही लेखिका हैं।"[176] 'गूँगा आसमान' संग्रह की कहानियों के संपूर्ण अवयव की छानबीन कर उसकी विषयवस्तु का विश्लेषण करते हुए. डॉ.मधुरेश जी लिखते हैं-

"नासिरा शर्मा की कहानियाँ महिला-लेखन में अर्न्तवस्तु के विस्तार का एक उल्लेखनीय उदाहरण है। उथल-पुथल भरे समूचे एशियाई समाज की साक्षी बन गृह युद्दों को बहुत निकट से देखा है। भौगोलिक ब्यौरों में लेखिका को अधिक दिलचस्पी नहीं है वे बस पात्रों, घटनाओं और प्रसंगों को घटित होने का एक माध्यम भर है।"[177]

आलोच्य संग्रह की उन कहानियों का यहाँ विश्लेषण हुआ है जिनमे स्त्री संवेदना मुखर रूप से रूपायित हुई हैं।

गूँगा आसमान-

"गूँगा आसमान' कहानी संग्रह की शीर्ष कहानी है। फरशीद नामक पुलिस अधिकारी इस कहानी में औरत को ही औरत के सामने खड़ा करके अपने गुनाह को बदले की भावना से छिपा लेता है और बेगुनाह बीबी को जो गुनाह की आलोचना करती है उसे फँसा देता है।

कहानी 'गूँगा आसमान' एक ऐसी कहानी है जिसमें ईरान को पुलिस का रंगीला मिजाज और उसके पाशविक प्रवृत्ति का लेखा-जोखा है। लेखिका ने एक ऐसे सच का पर्दाफाँस किया है जो नारी के निजी-संवेदना, सिकन एवं मनःस्थिति पर कुठाराघात करता पुलिस अधिकारी की अनैतिक, गैरकानूनी शक्ति की हकीकत है। यौन कुंण्ठा से ग्रसित 'फरशीद' कई औरतों को जबरदस्ती अपने घर में कैद रखता है फिर उनसे निकाह करके गैरकानूनी रवैये को कानूनी बनाता है। रोज जन्नत में घूमने का दावा करना और दूसरों को बेमौत मारना इनका धर्म, ईमान हो गया था। फरशीद कुछ औरतों को जबरन तो कुछ की मजबूरियों का फायदा उठाकर अपना शिकार बनाता है जिनमें शरारें, माहपारा, दिल आरा एवं शबनूर सामिल हैं विवाहित एवं मानसिक पंगु' 'फरशीद' इन सभी को अपने दुब्यसन का शिकार बनाने के फेहरिस्त में लगा रहता है किन्तु उसकी बीबी 'मेहरअंगीज' अपने पति की इन हरकतों को बिल्कुल पसंद नही करती है, वह उन सभी औरतों एवं लड़कियों को अपनी बेटी जैसा सम्मान देती है। पति के इस पाशविक प्रवृत्ति का वह चाहते हुए भी विरोध नहीं कर पाती थी कारण कि वह भी उसके कोप का भाजन हो सकती थी, इसलिए वह चुपके से उन औरतों को बाहर निकालने की कोशिश करती है परंतु पुलिस का इतना शक्त पहरा है कि उनको बाहर नही निकाल पाती ।

एक दिन वह अपने पति 'फरशीद' का हँसमुख चेहरा देख लड़कियों को आजाद करने की बात करती है "ख़ुदा ने बहुत दिया है। इन मासूम परिन्दों को उड़ा दो, यह गुनाह है, दीन-धर्म भी इसकी इजाजत नही देता है।"[178]

फरसीद 'मेहरअंगीज' को फटकारता है और उसकी बात को सिरे से नकार देता है, तब उसकी बीबी कहती है- "इस दुनियाँ में कुछ भी नामुमकिन नहीं है.. इससे तो कहीं अच्छा है कि बाहर हरामकारी करें और भूल जाए उस रांड को, मगर इन शरीफ बच्चियों को सारी उम्र कैद कर रखना कहाँ का इन्साफ है।"[179]

सामान्यतः माना जाता है कि औरत ही औरत की दुश्मन होती है। नासिरा शर्मा की ही अनेक कहानियों में यह लक्षित हुआ है। जैसे ' ततईया' कहानी किन्तु यहाँ पर कथा-नायिका मेहर अंगीज औरत की आजादी के लिए अपना सुहाग भी दाँव पर लगाने से गुरेज नही करती है। वह अपने भाई से अपने पति के कुकृत्यों का पर्दाफाँस कराती है और 'महापारा' को अपनाने की हिदायत देती है। दिलआरा और शबनूर को मुक्ति दिलाकर अपने चचाजाद भाईयों अब्बास और हैदर के लिए कुबूल करने को कहती है। इसके लिए एक नरक भोग रही उन तीनो लड़कियों को भी वह समझाती है कि यहाँ से अच्छा और सुकूनभरी जिन्दगी वहाँ तुम सब को मिलेगी और बड़े चतुराई से उनको घर से बाहर निकाल ले जाती है।

तीन लड़कियों की आजादी से प्रसन्न मेहरअंगीज खुद को बदनामी के घेरे में फँसा लेती है कारण की फरशीद को सच्चाई पता चल गयी थी। वह मेहर अंगीज पर बदला लेने हेतु औरतों का व्यापार करने का आरोप लगाकर गिरफ्तारी का वारंट निकालता है। वह मेहर अंगीज से कहता है- "तुम्हें नहीं छोड़ूँगा। तुमने मेरी गैरत को ललकारा है। मेरी इज्जत का मजाक उड़ाया है तुम मेरी पत्नी नही, मेरे मुकाबले पर खड़ी मेरी हरीक हो और अपने प्रतिद्वंदी को हराना मेरे जीवन का उद्देश्य रहा है।"180

आलोच्य कहानी में औरत ही औरत को पुरुष के चंगुल से आजाद करवाती है किन्तु पुरुष की बदला लेने की मंशा ने एक औरत को हथियार बना दूसरी औरत को मात देने की सफल कोशिश की है। फरशीद के कहने पर एक खूबसूरत जवान औरत मेहर अंगीज के कमरे से भागती है और फरशीद सिपाही के पैर पर गिरते हुए कहती है- "वह तुम्हारी औरत... मुझे पकड़ ले जाएगी, मुझे पर छुड़वा दो आगा.... तुमने एक रात की बात की थी मेरे साथ धोखा मत करो। मुझे मेरे भाई की आजादी चाहिए थी.... मेरे साथ दुश्मनी मत करो। कहते - कहते फरशीद के कदमों पर अपना सिर रखकर वहीं रोते-रोते नीम बेहोश सी हो गई।"[181]मीडिया वालों से घर भर जाता है। जो

औरत, नारी के हक एवं स्वतंत्रता के प्रति संवेदनशील थी, उसी को दूसरी औरत का सहारा लेकर गुनहगार बनाया गया। लोग मेहरअंगीज को ही बदचलन समझने लगे।

आलोच्य कहानी में लेखिका नारी की संवेदनाओं का त्रिकोणीय रूप व्यक्त किया है। जहाँ एक तरफ परतंत्रता एवं पुरुष के तानाशाही व्यवहार से प्रताड़ित महापारा दिलआरा एवं शबनूर के दर्द एवं बेबसी का चित्र उकेरा गया है वहीं दूसरी तरफ मेहरअंगीलज को औरत की आजादी हेतु प्रयत्नशील महिला के तौर पर दिखाया गया है। कहानी का तीसरा पक्ष बेहद संवेदनशील जान पड़ता है क्योंकि एक अन्य औरत को मेहर अंगीज के खिलाफ खड़ा करके षडयंत्र द्वारा उसे फँसाया जाता है। लेखिका का कहानी लिखने के प्रति शायद यही उद्देश्य रहा हो कि जब-तक औरत स्वयं अपनी और अपने जाति के प्रति संवेदनशील नहीं होगी तब तक वह किसी न किसी भेड़िये का शिकार होती रहेगी।

नई हुकूमत-

यह कहानी औरत के हक का वह मुकाम है जहाँ बेसहारा एवं अकेली तलाकशुदा स्त्री को उसका पुत्र नई हुकूमत सौंपता है। कहानी की नायिका 'हाजरा' है जिसकी शादी सत्ताईस वर्ष पहले अल्ताफ के साथ होती है। इन दोनों से एक पुत्र एवं दो पुत्रियाँ उत्पन्न होती है। दोनो बेटियों की शादी हो जाती है और वे दोनों अपने ससुराल में खुशहाल जिन्दगी व्यतीत करती हैं। बेटा अनवर दुबई में नौकरी करता है। सर्वविदित है कि पुरुष के प्रेम की अवधि बहुत कम होती है। इस कहानी में भी अल्ताफ विवाह के सत्ताईस वर्ष बाद 'महजबीन' नामक युवती से दूसरी शादी कर लेता है।

अपने गुनाह को रिश्ते का नाम देकर अल्ताफ हाजरा से महजबीन को छोटी बहन कुबूल करने की विनती करता है किन्तु हाजरा जवाब देते हुए कहती है कि बहन कभी सौत नही बनती है। तब अल्ताफ कहता है- "यह तुम्हारी बाँदी बनकर रहेगी कि

भी तुम्हारे सुख में कोई खलल नही डालूँगा। सब कुछ वैसा ही चलेगा जैसा पिछले सत्ताईस सालों से चलता आया है। तुम इस घर की मालकिन हो, कुंजी तुम्हारे हाथ होगी ।"[182]

जवाब में हाजरा कहती है- "घर पर, जिसकी आधी गृहस्थी मेरी मेहनत से बनी है उसकी मालकिन तो मैं हूँ, उसमें नई बात क्या है ? मगर इतना बड़ा कदम तुमने उठाया और मुझे भनक भी नहीं लगने दी। जवान बच्चों के रहते तुमने क्या कर डाला।"[183]

इस मजाजी दुनियाँ के ख़ुदाओं ने जो भी स्लामिक कानून बनाये हैं, वह अपनी सुविधाओं के हिसाब से। तीन तलाक जैसी का शिकार हाजरा क्रोध में छः बार तलाक बोलकर अल्ताफ के घर को बिना हक लिए छोड़कर चली जाती है । आनन-फानन में वह अपने बेटे 'अनवर' का पता भी लेना भूल जाती है। और अपनी माँ के पास सिलाई करके आजीविका चलाती है। एकतरफ हाजरा की संवेदना औरत के स्वाभिमान की महत्ता को ज्यादा बल देता नजर आता है तो दूसरी तरफ उसकी माँ की बूढी संवेदना का अलग ही रूप चित्रित हुआ है। वह कहती है कि, "तलाक दी थी मर्द की तरह तो 'मिताह' देता। आखिर औरत खाती-पीती भी है, वह भी इन्सान है। उसे भी सरदी-गरमी लगती है। सच है आज जमाना बदला तो मर्द भी बदल गये, अब पहले वाली बातें कहाँ उनमें ।"[184]

क्षीण होते मानवीय संवेदनाओं के प्रति चिंतित हाजरा की माँ आगे कहती है, "माना की मर्द तोताचश्म होते हैं। उनके प्यार, मोहब्बत की मियाद बहुत छोटी होती है। मगर इन्सानियत भी एक चीज होती है। शादियाँ करो, मगर इस तरह तलाक देकर पहली को बेसहारा तो मत बनाओ। सच कहती है, पहले तलाक देकर खाली हाथ औरत को वापस भेजना उनकी मर्दाना गैरत के खिलाफ था मगर अब..185

आलोच्य कहानी की बूढ़ी संवेदना गुजारा एवं आर्थिक सुरक्षा के प्रति चिंतित है किन्तु औरत की आज की पीढ़ी खैरात में मिले दया की भीख में विश्वास न करके आत्मर्निभरता एवं स्वाभिमान की रक्षा में ज्यादा विश्वास रखती है। वह अपनी माँ की बात टालते हुए कहती हैं । कि यदि वहाँ से कुछ लाती भी तो कितने दिन चलता ? जवाब में हाजरा की माँ कहती है "बात चलने की नही है बल्कि कायदे की है। तुमने अपना हक क्यों नही लिया ? जब तलाक ली थी तो फिर छाती पर चढ़कर गुजारा भी तो लेती।"[186]

कर्म पर भरोसा करने वाली आज की पीढ़ी की प्रतीक हाजरा बार-बार स्वाभिमान, आत्मर्निभरता, इज्जत और स्त्रीत्व की रक्षा का हवाला देती रही किन्तु वृध्ध माँ अपने अतीत का दामन थामे, आज की जल्दबाज पीढ़ी को सबक देते हुए कहती है कि, "खुला मैदान छोड़ आयी ? तुम लड़कियाँ भी अजीब हो ! -

जहाँ हक बनता है वहाँ लेती नहीं हो, जहाँ लड़ना होता है, वहाँ खामोश हो जाती हो और जहाँ कुछ भी नहीं करना होता है वहाँ- दुकान उठा देती हो.. ? कभी-कभी तो लगता है कि जैसे तुमने ही मर्दों को बिगाड़ कर रख दिया है अपनी हेकड़ी में ।"[187]

हाजरा सोचती है की यदि उसकी उम्र उसके माँ की तरह लम्बी हुई तो वह अकेली जिन्दगी कैसे काटेगी ? आत्मनिर्भर हाज़रा का यह घर भी धीरे-धीरे खुशनुमा होने लगा। एक वर्ष बाद उसका 'बेटा' 'अनवर' एक सुबह उसके सामने आकर खड़ा हो जाता है। माँ की ममता बेटे को छाती से लिपटाकर बिलख उठी। कहानी सुखान्त होती है। अनवर माँ को अपने साथ ले जाता है और यह हुक्म जारी करता है कि पिता जी नई दुल्हन के साथ घर से बाहर जाएंगें माँ नहीं क्योंकि परिवार की ईकाई से पिता अलग हुए हैं माँ नही। हाजरा भी इस नयी हुकूमत की बागडोर को कसकर

पकड़ लेती है कारण कि उसका खुद का बेटा उसका वारिश उसे खुद इंसाफ दिलाने आया था।

नासिरा शर्मा ने इस कहानी के माध्यम से तीन तलाक की समस्या को उजागर किया है, साथ ही साथ औरत-मर्द के बीच हुए संबंध विच्छेद की त्रासदी से जूझ रही और को उसके बेटे के द्वारा इंसाफ दिलवाने की नई द्रष्टि वं साहित्य में नये कलेवर का सुत्रपात किया है ।

इंसानी नस्ल कहानी संग्रह में स्त्री संवेदना

'इंसानी नरल' संग्रह की लगभग सभी कहानियाँ 'इन्सान की इनसानियत एवं मौलिक कर्तव्यों के प्रति सचेत करने वाली हैं। इस संग्रह की कुछ कहानियों में स्त्री पातों की चर्चा जरूर हुई है किन्तु इतने गहन स्तर पर नही कि उनमे नारी संवेदना का विस्तार से विश्लेषण किया जा सके। बारी विषयक दृष्टिकोण से कहीं ज्यादा मानवीयता एवं इनसानियत की चर्चा आलोच्य संग्रह में देखने को मिलता है। संग्रह के फ्लैप पर लिखा है-

"नासिरा जी ने इस संग्रह की सभी कहानियों में बड़ी सादगी से जीवन के यथार्थ को सामने रखा है। अंतर्धारा में एक आग्रह अवश्य महसूस होता है कि इन्सान ने अपने 'स्वयं' को जीना छोड़ दिया है। वह अपने अंदर यात्रा करने की जगह बाहर की भौतिक दुनियाँ के कोलाहल में भटकता जा रहा है, जो उसकी सादी सहजता को खत्म कर उससे सुख के सारे क्षण छीनता जा रहा है।"[188]

संग्रह के निचोड़ पर अर्थात सभी कहानियों के संदर्भ में लेखिका ने कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न उठाये हैं जो इंसानी कर्मनिष्ठता एवं उसके सर्वागीण विकास के राह को सुगम बनाने में काफी सहायक सिद्ध हो सकती है।

संग्रह के फ्लैप पर ही लिखा है "आाखिर यह इन्सानी नसल, जो एक दूसरे की उत्पत्ति की सिलसिलेवार कड़ी है, वह वास्तव मैं चाहती क्या है? एक-दूसरे से हाथ

मिला मानव-श्रृंखला को मजबूत बनाना या फिर एक दूसरे के विरोध में खड़े होकर अलगाव की भूमिका निभाना ? यह अलगाव हमें सभ्यता के किस मोड़ पर ले जाएगा ? अलगाव की इस मानसिकता से मुक्त होकर इन्सान एक नए युग का सुत्रपात क्यों नहीं कर सकता ? क्या वह अपने अंदर की यात्रा कर इन्सानियत के आलोकित क्षितिजों को छूना नहीं चाहेगा?"[189]

नासिरा शर्मा इस संग्रह के दो शब्द में लिखती हैं "सदा मेरा विश्वास रहा है कि इन्सान एक है, मगर उसका रंग-रूप, भाषा, भावना, विचार अलग-अलग होते हैं, जो अक्सर टकराहट का कारण बनते हैं। यह टकराहट अपने में एक बड़ा प्रश्न भी सामने रखती है कि आखिर यह युद्ध, यह मनमुटाव किसलिए ? थोड़ी-बहुत रंजिश आटे में नमक की तरह जीवन के स्वाद को बढ़ा देती है मगर जब यह शत्रुता का रूप घर लेती है तो भीषण परिणाम सामने आते हैं, जो स्वयं मनुष्य को शर्मिंदा करते हैं।"[190] इस्लामिक देशों एवं उनकी एकांगी संस्कृति से ऊबकर नासिरा जी भारत की तरक रुख करती हैं, यहाँ की साझी संस्कृति किसी भी मनुष्य को अपनी ओर आकर्षित कर सकती है। देश की उन्नति का गुणगान करते हुए वे लिखती है- "आज मेरा भी भारत वर्ष को देखने का अंदाज बदल गया है कि काश! बेकार की लड़ाइयाँ, द्वेष, कुण्ठा, ईर्ष्या यदि हम भारतीयों के बीच से हट जाए, जो किसी धून की तरह हमारी क्षमता को चाटता रहता है, तो हम कितना आगे बढ़ सकते हैं, खासकर तब जब हमारे पास न केवल दिमाग है बल्कि धरोहर के रूप में प्राचीन सभ्यता एवं साझी संस्कृति की रंगारंग घटा भी है।"[191]

लेखिका नें आलोच्य संग्रह की तमाम कहानियों में मानवीय संबंधों को टूटते-बिखरते आयामों में उतारने की कोशिश की है जिसका मुख्य कारण, जातिवाद, सम्प्रदायवाद, छोटे-बड़े होने के ओछी मानसिकता है। नारी संवेदना विषयक तत्व-

पर्याप्त मात्रा में न प्राप्त होने की कारण इस 'कहानी संग्रह' की किसी भी कहानी का वर्णन करना तर्क संगत नही जान पड़ता। अत: लेखिका के मन्तव्य ही द्रष्टव्य हैं।

बुतखाना कहानी संग्रह में स्त्री संवेदना

नासिरा शर्मा की कहानियों का यह नया संग्रह सामाजिक चेतना, मानवीय संवेदना और इंसानी जटिल प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति का दस्तावेज है। यह वर्तमान समय की विषमताओं की कहानियों में इस सहजता से पिरोता है कि इंसानी रिश्तों की ललक पात्रों में बाकी ही नहीं रहती, बल्कि टूटते रिश्तों और बदलते मानवीय सरोकारों की कचोट पाठकों को गहरी तपकन का एहसास देती है ।

'नासिरा शर्मा' बुतखाना कहानी संग्रह के संदर्भ में स्वयं लिखती हैं- "मेरी यह कहानियाँ तीन भागों में विभाजित की 'बुतखाना' मेरी पहली कहानी है जो 'सारिका' के नवलेखन अंक 1976 में छपी थी जहाँ से मेरे लेखन की शुरुआत होती है फिर 'मरियम' (1984), खिड़की 1984, नमकदान-1987 में छपीं। अन्य कहानियाँ 2000 और 2001 में लिखी गई हैं। इस तरह से यह संग्रह मेरे 25 वर्षों के लेखन का एक समावेश है।"[192]

'बुतखाना' कहानी संग्रह में कुल 22 कहानियों संग्रहित है। जिसमें से 13 लघु कथा पर आधारित हैं। 8 कहानियाँ की विषयवस्तु थोड़ी विस्तृत जान पड़ती है किन्तु नारी संवेदना परक तीन से चार कहानियों ही उचित जान पड़ती हैं। औरत की कोख पर भी उसका कितना अधिकार है? वह अपनी इच्छा से निर्णय भी अपने पक्ष में ले सकती है या नहीं ऐसी तमाम यातनाओं का यथार्थ चित्रण इस संग्रह में देखने को मिलता है। जिसका विवेचन यहाँ दृष्टव्य है-

अपनी कोख-

अपनी कोख नामक कहानी में औरत की संवेदना को दो स्तरों पर चोट पहुँचायी जाती है; पहली माँ - बाप की जल्दबाजी में, सफलता मिलने से पहले विवाह

और सास एवं पति के कारण पोते-पोती, बेटा-बेटी प्राप्त करने की कमना से पारिवारिक बंधनों में फँस जाने की कशमकश। इतना ही नहीं। इसके बाद भी उस औरत को घर का वारिश पैदा करने की परीक्षा से भी गुजरना पड़ता है, वरना कोख में पल रही बच्ची का एबोर्सन करवाना पड़ेगा। माँ की ममता को कितने बेरहमी से परिवार की महत्वाकांक्षाओं का शिकार होना पड़ता है इसी बेबसी का सजीव चित्रण आलोच्य कहानी की विषयवस्तु हैं ।

आलोच्य कहानी की कथा नायिका 'साधना' और नायक 'संदीप' है। साधना आई.पी.एस अफसर बनना चाहती है किन्तु असामयिक विवाह के प्रस्ताव के कारण वह अपनी सफलता से वंचित रह जाती है। विवाहोपरांत जब वह परीक्षा की तैयारी में जुटने का प्रयास करती है तो पता चलता है कि साधना गर्भवती हो गई है। इस खबर से वह इतना घबरा गई कि उसको अपना सारा जीवन अंधकारमय सा लगने लगा। घर में बधाईयों का आदान-प्रदान होने लगा। साधना की सारी पुस्तकें आलमारी में बंद हो गई। साधना अभी बच्चा नही चाहती थी किन्तु संदीप इस बात को सिरे से नकार दिया और हवाला देते हुए कहा कि- "ऐसा मुमकिन नहीं है। बच्चा मै भी चाहता हूँ और यह बच्चा तुम्हारा अकेले का नहीं है।"[193]

साधना स्वीकार भरे लहजे में कहती है कि मैं आपकी बात मानती हूँ किन्तु मेरा सारा वर्ष खराब हो जायेगा। संदीप भी बड़े सावधानी से जवाब देता है कि मैं तुम्हारा पूरा ध्यान रखूँगा । जो भी कठिनाई तुम्हारे पढ़ाई में आयेगी उसे सरल बनाने की कोशिश करूँगा किन्तु एक जीव की हत्या करना मुझे ठीक नहीं जान पड़ता।
साधना 'ठीक है' कहकर चुप हो जाती है और सोचती है-

"जरा सी बात उसकी न मायके वालों ने रखी न ससुराल वालों ने ? वह है क्या ? इंसान है या पात्रतू जानवर जिसको प्यार तो सब करते हैं, मगर बाँधे जंजीर में रखना चाहते हैं। आखिर क्यों ?" 194

समय अपने गति से आगे बढ़ता गया और ठीक नौवें महीनें में साथना ने एक चन्द्रमुखी को जन्म दिया। लक्ष्मी का जन्म हुआ है साधना उत्साहित है किन्तु अस्पताल में मौजूद सास एवं अन्य सदस्यगण चिंताग्रस्त। ऐसा प्रतीत होता है जैसे घर में कन्या का आविर्भव नही हुआ बल्कि कोई दुर्घटना हो गई हो। साधना पूरे मनोयोग से बेटी का लालन-पात्रन करने लगी। छः माह के उपरांत वह फिर से गर्भवती हो जाती है। पुत्री 'सरिता' के द्वारा प्राप्त' वात्सल्य से अनुप्राणित, साधना दोबारा माँ बनने की प्रक्रिया से गुजरते हुए और अधिक हर्षित एवं संवेदनशील हो उठी किन्तु सास की उम्मीद फिर से इस बात पर टिक जाती हैं कि, क्या साधना घर का चिराग उत्पन्न करेगी ? इसी कशमकश में वह बहू को लिंग परीक्षण कराने का सलाह देती है। सलाह ही नही वरन् परीक्षण कराती भी है। परिणाम में फिर पोती का मुँह देखना पड़ेगा | सास ने बहू को एर्बोर्सन कराने को बोलती है। आवक् खड़ी साधना सास के चेहरे को ताकने लगी जिस पर आशा- निराशा के भाव आ -जा रहे थे। "उसने घबराकर आखें नीची कर लीं और तेजी से 'सरिता' को सीने से लिपटाए अपने कमरे की तरफ भागी। उसका सारा वजूद काँप रहा था। उसने भी एक दिन ऐसा ही सोचा था। मगर अब यह नामुमकिन है। मेरी लड़कियाँ सिर्फ औलादें नहीं, मेरा सपना होंगी। चाहती तो मैं भी बेटा हूँ, मगर लड़की की हत्या की कीमत पर नहीं.... हरगिज नहीं॥"[195]

सास को चिंता में देखकर साधना आस्वासन देती है कि मैं आपका दुःख समझती हूँ मगर... मैं भी बेटे की माँ बनना चाहती हूँ। आपका अरमान मेरा भी अरमान था। वह सास से, कहती है-"मै आपको वचन देती हूँ तीसरा गर्भ मैं गिरा दूँगी अगर.... आप मेरा विश्वास कीजिए । साधना का गला रुँध गया, इसके बावजूद कि गृह रणक्षेत्र की यह केवल कूटनीतिज्ञ चाल भर थी, तो भी मसला अहसास से जुड़ा था। औरत के बदन से जुड़ा था। उसकी रचना और सृष्टि से जुड़ा था।" 196

दूसरी बेटी के जन्म के बाद पहले जैसी खुशी घर के फिजा में भले न थी किन्तु साधना का विश्वास और अधिक गहरा हो गया था। उसके दो बाजू, दो आखें और उग आई थीं। इस आशा के साथ कि आधी दर्जन हथेलियाँ समय के आकाश को साधने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएँगी।

'अपनी कोख' कहानी 'शीर्षक' की सार्थकता अपने अन्तिम पड़ाव पर मनोविश्लेषणात्मक परिणाम देती है। कथा नायिका तीसरा गर्भ धारण करती है और इस बार वह पुत्र की जननी बनने वाली होती है। कारण कि इस बार वह लिंग परिक्षण अकेले में कराती है। एक पल के लिए- साधना हर्षित होती है फिर सोचती है "यह लड़का यदि पैदा हुआ तो मेरी दोनों लड़कियों को निगल जायेगा ।

उसके आगे सास बेटियों से बर्ताव ठीक नहीं रखेंगी और क्या पता संदीप भी बेटा पाकर बदल जाए ? घर का बदला स्वरूप क्या होगा ? क्या करू मैं ? सास को यह खुशखबरी दूँ ? संदीप को दिया बचन निभाऊँ कि... क्या करू ?"[197]

अन्ततः साधना मन मस्तिष्क के उहापोह से बाहर निकलती है और पुत्र वाली बात छुपा लेती है। संदीप तीसरा बच्चा नही चाहता है और सास लड़की नही चाहती है। साधना एक बिन्दु पर जाकर अपनी संवेदना को स्थायी आयाम प्रदान करती है। वह सोचती है "लड़के-लड़कियों में भेद करने वाला यह समाज तब तक बलवान बना रहेगा जब तक नारी उसके इशारे पर चलती रहेगी। कोख उसकी है, वह चाहे तो बच्चा पैदा करे चाहे तो न पैदा करे। चयनकर्ता वही है, अगर वह मर्दों को पैदा करना बंद कर दे तो इस समाज का क्या होगा। ....यह जीवन उसका है, इस जीवन को वह अपनी इच्छा से आकार देगी। वह अपनी जमीन ही नही अपने आसमान को भी खुद नापेगी। यही तो उसके एक स्वतंत्र स्त्री होने की पहचान है। वह इस पहचान को बरकरार रखेगी ।"[198]

लेखिका यहाँ पर साधना के माध्यम से स्वयं नारी के पक्ष में गुपचुप संवाद करती नजर आती है। नारियों के स्वतंत्र अस्तित्व हेतु पारिवारिक मानसिकता को समझते हुए एक स्त्री अपनी कोख पर अपना अधिकार दिखाते हुए बेटे का एबार्शन करा देती है। कारण कि बेटियों का भविष्य सुनहला हो सके ।

बिलाव-

बुतखाना कहानी संग्रह के कुछ अन्य कहानियों में स्त्री की प्रताड़ना और वेदना का चित्र दिखाई पड़ता है किन्तु आंशिक रूप से । यथा--'बिलाव' कहानी में 'बिलाव' प्रतीक है पाशविक प्रवृत्ति का। इस कहानी में एक पिता द्वारा पुत्री का यौन शोषण करने की दुर्दान्त घटना को अंजाम दिया गया है।

आलोच्य कहानी में पिता बलबीर अपनी ही पुत्री मैना का बलात्कार करता है। इस दरिन्दगी के जवाब में बलवीर की पत्नी सोनामाटी नें अपने ही पति के खिलाफ ढाल बन जाती है।

नारी जाति की मर्यादा और अस्मिता के खातिर सोनामाटी न केवल उसे जान से मारने की असफल कोशिश करती है वरन् लम्बे समय के लिए उसे कारावास की हवा खिलाने में सफल भी होती हैं। बड़ी बेटी मैना अस्पताल में रहती है। वहाँ पर उसका उपचार चल रहा होता है जिस दिन सोनामाटी मैना को अस्पताल से घर लाने जाती है उसी दोपह उसकी छोटी बेटी 'हीरा' का भी यौन शोषण हो जाता है। हीरा अभी छोटी और अनजान रहती है। सोनामाटी पुलिस में रपट लिखवाना चाहती है किन्तु बलात्कार की बदनामी का दर्द झेल रही मैना माँ को यह कहकर रोक लेती है कि "तुम्हें मेरी सौगन्ध, माँ, रिपोर्ट मत लिखाना । अपमान-दर-अपमान झेलने की उम्र हीरा की नहीं है। मेरे और उसके साथ हुए अत्याचार में बड़ा फर्क है। तूने बापू को पकड़वा दिया, बल्कि यूँ कहूँ, उसकी हत्या करके भी तू उसको मार न सकी और वह जेल में है। तुझको संतोष है, मगर हीरा....? किसको पकड़ोगी, माँ ? बिना सबूत के

मिली बदनामी की व्यथा अब मुझसे सहन नही होगी। चाहे तू मुझे कुछ भी कह ले, मगर कुछ अत्याचार, कुछ सच्चाइयां कड़वे घूँट की तरह निगलनी पड़ेगी।" 199

सोनामाटी का हृदय फट पड़ा वह करुणा के अथाह सागर में डूबते हुए फिर से वेदना प्राप्त करने की कोशिश करती है और जबाब देती है "अरे मैना, यू न बोल। यह कहाँ का न्याय है कि सोती लड़की का गहना कोई भी उतार ले जाए ? चुप रहकर चोर को शह देना ठीक नही। मुझे मत रोक, मैना, मुझे मत रोक मै पुलिस को खुद सबूत लाकर दूंगी।"[200]

माँ अपनी पुत्री के माध्यम से समूची नारी जाति की अस्मिता की रक्षा करने हेतु संवेदनशील हो उठी। उसकी संवेदना का स्वर असहिष्णु हो उठा। वह बलात्कार करने वाले अत्याचारी से ज्यादा क्रोधे उस सोच के प्रति है जो ऐसा कुकृत्य करने की मनसा है। वह बलबीर को नही बल्कि बलवीर के प्रतिक को हराने हेतु सनक उठती है और मन-ही-मन दोहराती है- "मैं तुझे ढूंढ़कर रहुँगी... तुम सबको एक-एक करके अन्दर डलवा दूँगी । अब बात यूँ ज्यादा दिन नही चलेगी। बलबीर मैं तुझे जीतने नहीं दूँगी, हरगिज नहीं।"[201]

निष्कर्ष-

नासिरा शर्मा स्वतंत्रता के बाद की सबसे विवादास्पद एवं यथार्थ भाव बोध की कहानीकार हैं। हिन्दी साहित्य के कैनवास पर इनकी कहानियाँ उस ध्रुवतारे के समान देदिप्यमान हैं जो आकाशगंगा के उच्चतम दूरी पर होते हुए भी स्वतः प्रकाशित है। वैसे तो नासिरा शर्मा स्त्री विमर्शपरक लेखन नहीं करती इनके कथा साहित्य की विषयवस्तु साहित्य के मुख्य धारा से ज्यादा प्रभावित जान पड़ती है किन्तु इनका कहानी संसार स्त्री संवेदना के काफी निकट है। लेखिका अपने कलम की पैनी धार से उन तमाम पारंपरिक रूढ़ियों, मान्यताओं और समस्याओं को काटने का कार्य करती हैं जो स्त्री-जाति को मानव नहीं बल्कि उपभोग की वस्तु मात्र समझते हैं। अपनी छोटी-

छोटी कहानियों के माध्यम से उन्होंने स्त्री के चेतना को जागृत करने, उसे समस्याओं से लड़ने की असीम ताकत प्रदान करती नजर आती हैं।

लेखिका अपनी कहानियों के माध्यम से सीधे औरत को आगाह करती दिखाई पड़ती है। इनकी लेखनी ने उन - मानदण्डों को उजागर किया है कि जब तक औरत अपने हक की लड़ाई स्वयं नहीं लड़ेगी, अपने सपनो को आकार स्वयं नही देगी तब तक पुरुष हर दिशा का कानून अपने अनुकूल बनाता रहेगा और औरत उसकी कठपुतली बन सरकश में या तो तमाशा बनी नाचती रहेंगी या तो चुपचाप अत्याचार सहती रहेगी इनकी समस्त कहानियाँ जिनमें नारी संवेदना के स्वर उजागर हुए है उनमें औरतों ने अपनी हजारो सालों की खामोशी को तोड़ा है तथा समाज, परिवार,धर्म, राजनीति के सामने प्रश्नवाचक मुद्रा में खड़ी होकर अपनी चुप्पी को तोड़ने की सफल कोशिश की हैं इनकी सर्जना में औरत की स्थितियों की व्यथा, दुःख और संघर्ष की अभिव्यक्ति है।

राकेश कुमार के अनुसार-

"स्त्रीत्व की स्थिति उसकी चेतना को परिभाषित करना आज बहुत जरूरी हो गया है। लिंग भेद ने स्त्री को अस्तीत्व-हीन, वाणीहीन करके उसकी अस्मिता को रौंदा है। पैतृक अनुशासन के नियमों द्वारा उसके बढ़ते कदम को रोका गया है। दुनिया की हर भयानक घटना हमारे स्मृति पटल को संवेदित कर सकती है तो स्त्रियों की अश्रुगाथा हमें संवेदित, उत्तेजित क्यो नही करती? क्या यह आधी दुनिया की आबादी के उत्पीड़न एवं मुक्ति का प्रश्न नहीं है?"[202]

साहित्य में नारी विमर्श का आर्विभाव इस बात का सबूत है कि, साहित्य की मुख्यधारा में नारी संवेदना को कम ही स्थान दिया गया। यदि कुछ बात कही भी गई है तो पुरुष प्रधान समाज के उन तमाम साहित्यकारों ने अपनी सुविधा के हिसाब से औरत के चरित्र को गढ़ा है जो सहानुभूति परक साहित्य तो कहा जा सकता है किन्तु

स्वानुभूति संवेदना का यथार्थ मानचित्र नहीं हो सकता। नासिरा शर्मा के कहानियों में उन्ही तत्वों को ज्यादा उठाया गया है जो परंपरा से हमारे समाज में रूढ़ हो गई थी। उस ग्रन्थि को खोलने की भरकस कोशिश किया गया जो औरत जाति सदियों से चुप होकर सहती आ रही थी। चाहे वह पारिवारिक कलह हो या फिर यौन सुचिता। आर्थिक स्वतंत्रता हो या फिर स्वाभिमान की चिन्ता। औरत के हक में जाने वाले उन सभी प्रश्नो का हल लेखिका ने औरत के निर्णय पर स्वतंत्र छोड़ दिया है।

नासिरा शर्मा के कथा साहित्य की सभी स्त्रीपात्र अपनी संवेदना, अपने विचार, स्वाभिमान, आर्थिक स्वतंत्रता राजनीतिक सहभागिता, शिक्षा, रोजगार, वैवाहिक संबंध, दैहिक-स्वतंत्रता आदि से जुड़े मुद्दों पर जब कभी दूसरों का नियंत्रण होता देखती हैं तुरंत प्रश्नवाचक मुद्रा में खड़ी होकर उसका विरोध करती नजर आती हैं। सभी समस्याओं का निदान वह स्वयं करने की कोशिश करती है। समस्याओं का जहाँ निदान संभव नही हो पाता वहाँ वह समस्याओं से संघर्ष करती दिखाई पड़ती है। परिस्थितियों को अपने अनुकूल करना, अत्याचार का विरोध करना, यथार्थ को स्वीकारना लेखिका के स्त्री पात्रों की सबसे बड़ी विशेषता है। और यही एक सफल कहानीकार की भी विशेषता है। अर्थात जिस उद्देश्य को लेकर कहानी लिखी है वह लक्ष्य फलीभूत होता दिखाई पड़ा है

संदर्भ सूची

1. डॉ. विजय राउत, नासिरा शर्मा व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृष्ठ-57,
2. नासिरा शर्मा, शामी कागज(कहानी संग्रह) की (भूमिका)से दो शब्द, पृष्ठ-07)
3. ब्रहमस्वरूप शर्मा, आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृष्ठ-104,
4. सीमोन द बोउवार, स्त्री उपेक्षिता (प्रभाखेतान), पृष्ठ - 65
5. राकेश कुमार, नारीवादी विमर्श, पृष्ठ - 67
6. शर्मा नासिरा, पत्थर गली (कहानी संग्रह) दो शब्द से, पृष्ठ-7
7. वही, पृष्ठ - 07
8. वहीं, पृष्ठ - 08
9. वही, मुख्य-पृष्ठ से
10. वही, पृष्ठ - 21
11. वही, पृष्ठ- 22
12. वही, पृष्ठ-18
13. वही, पृष्ठ-11
14. वही, पृष्ठ 23
15. वही
16. वही पृष्ठ- 26
17. वही, प्रष्ट -144
18. वही, पृष्ठ -145
19. वही, पृष्ठ - 150
20. वही, पृष्ठ - 151
21. वही, पृष्ठ - 156
22. वही, पृष्ठ- 161

23. वही, पृष्ठ- 46

24. वही, पृष्ठ- 48

25. वही, पृष्ठ- 47

26. वही.

27. वही

28. वही

29. वही, पृष्ठ- 48

30. नासिरा शर्मा, संगसार (कहानी संग्रह) दो शब्द से

31. वही

32. वही

33. वही

34. शर्मा नासिरा, संगसार, पृष्ठ -24

35. वही

36. वही

37. वही

38. नासिरा शर्मा, संगसार, पृष्ठ :- 23

39. वही

40. नासिरा शर्मा, संगसार, पृष्ठ - 24

41. नासिरा शर्मा, संगसार, पृष्ठ - 42

42. वही

43. वही, पृष्ठ- 43

44. वही, पृष्ठ - 43

45. नासिरा शर्मा, संगसार, पृष्ठ- 54

46. वही, पुष्ट -116

47. वही, पृष्ठ -117

48. वही

49. नासिरा शर्मा, संगसार, पृष्ठ- 11

50. वही

51. वही

52. वही

53. नासिरा शर्मा, संगसार, पृष्ठ-119

54. वही

55. वहीं

56. नासिरा शर्मा, संगसार, पृष्ठ- 124

57. वही पृष्ठ - 128

58. वही, पृष्ठ- 131

59. वही

60. नासिरा शर्मा, संगसार, पृष्ठ- 137

61. वही

62. वही

63. नासिरा शर्मा, सँगसास (आखिरी पहर), पृष्ठ - 170

64. वही

65. वही

66. नासिरा शर्मा, संगसार (आखिरी पहर), पृष्ठ - 174

67. वही

68. वही

69. वही, पृष्ठ- 175

70. वही, पृष्ठ - 176

71. नासिरा शर्मा इब्ने मरियम (कहानी संग्रह) दो शब्द, पृष्ठ -8

72. नासिरा शर्मा इब्ने मरियम (कहानी संग्रह) मूल पृष्ठ से

73. वही, फ्लैप से

74. नासिरा शर्मा इब्ने मरियम पृष्ठ -संख्या - 66

75. वही, पृष्ठ- 67

76. वही, पृष्ठ- 67

77. वही, पृष्ठ- 68

78. वही, पृष्ठ - 68

79. वही पृष्ठ - 68

80. वही, पृष्ठ- 68

81. नासिरा शर्मा, इब्ने मरियम, पृष्ठ-148

82. वही, पृष्ठ - 149

83. वही, पृष्ठ-150

84. वही, पृष्ठ-110

85. नासिरा शर्मा, इब्ने मरियम, पृष्ठ-113

86. नासिरा शर्मा, शामी कागज, पृष्ठ - 16

87. वही, पृष्ठ - 40

88. वही, पृष्ठ- 21

89. इंतजार हुसैन, कछुए, पृष्ठ - 72

90. नासिरा शर्मा, शामी कागज (कहानी संग्रह), पृष्ठ- 96

91. वही, पृष्ठ - 96

92. वही, पृष्ठ -97

93. वही, पृष्ठ - 97

94. वही, पृष्ठ - 97

95. हुसैन इंतजार, कछुए, पृष्ठ -120

96. संपादक, अहमद एम.फिरोज, नासिरा शर्मा एक मूल्यांकन, पृष्ठ-193,

97. राखी मौर्या, नासिरा शर्मा के साहित्य में नारी-विमर्श, पृष्ठ-165,

98. नासिरा शर्मा, शामी कागज, (कहानी संग्रह) भूमिका से (दो शब्द), पृष्ठ -08

99. वही, पृष्ठ- 7

100. वही

101. नासिरा शर्मा, सबीना के चालिस चोर, (कहानी संग्रह) पृष्ठ-07 (दो शब्द)

102. वही, पृष्ठ - 8

103. नासिरा शर्मा, नासिरा शर्मा की चुनिंदा कहानियाँ, पृष्ठ-199,

104. नासिरा शर्मा एक मुलाकात, शोधार्थी की नीजी वार्ता, एम०एस०यू० (1मार्च-2015)

105. नासिरा शर्मा, की चुनिंदा कहानियाँ, पृष्ठ - 202

106. वही

107. वही, पृष्ठ - 203

108. वही

109. वही, पृष्ठ- 205

110. नासिरा शर्मा, औरत के लिए औरत, (लेख संग्रह), पृष्ठ- 39,

111. नासिरा शर्मा, नासिरा शर्मा की चुनिंदा कहानियों, पृष्ठ-212

112. वही, पृष्ठ-(कवर पृष्ठ) (डॉ.आर. एस. अग्रवाल)

113. वही, पृष्ठ-216

114. वही, पृष्ठ-216

115. नासिरा शर्मा, सबीना के चालिस-चोर (कहानी संग्रह) पृष्ठ-135

116. वही, पृष्ठ-137

117. वही, पृष्ठ-139

118. वही, पृष्ठ-140

119. वही, पृष्ठ-140-141

120. नासिरा शर्मा, ख़ुदा की वापसी (कहानी संग्रह) निवेदन से, वही, पृष्ठ - 07

121. वही

122. वही, पृष्ठ-09

123. वही, पृष्ठ-10

124. शर्मा नासिरा, ख़ुदा की वापसी कहानी, पृष्ठ-15

125. वही, पृष्ठ-18

126. वही, पृष्ठ-19

127. वही, पृष्ठ - 26

128. वही, पृष्ठ- 27

129. वही

130. नासिरा शर्मा, ख़ुदा की वापसी (कहानी) पृष्ठ - 30

131. वही

132. वही

133. वही, पृष्ठ- 31

134. वही

135. वही

136. वही

137. नासिरा शर्मा, दहलीज कहानी, पृष्ठ- 63

138. वही, पृष्ठ -64

139. वही, पृष्ठ - 67

140. वही

141. नासिरा शर्मा, खुदा की वापसी (दहलीज कहानी)-पृष्ठ - 68

142. वही, पृष्ठ-69

143. वही

144. वही पृष्ठ - 70

145. वही,

146. वही

147. वही पृष्ठ- 72

148. वही

149. वही

150. वही, पृष्ठ - 75

151. वही

152. वही

153. वही

154. वही,पृष्ठ-77

155. वही, पृष्ठ - 78

156. वही, पृष्ठ - 79

157. वही, पृष्ठ - 79

158. नासिरा शर्मा, ख़ुदा की वापसी संग्रह (दूसरा कबूतर-कहानी), पृष्ठ- 121

159. वही, पृष्ठ-122

160. वही

161. वही

162. वही, पृष्ठ - 123

163. वही, पृष्ठ-125

164. वही

165. वही

166. वही, पृष्ठ-129

167. वही,पृष्ठ-129

168. वही

169. वही, पृष्ठ-130

170. नासिरा शर्मा, ख़ुदा की वापसी संग्रह (बचाव-कहानी से), पृष्ठ-149

171. वही

172. वही

173. नासिरा शर्मा, खुदा की वापसी संग्रह के (निवेदन से

174. वही

175. नासिरा शर्मा, गूँगा आसमान (कहानी संग्रह) के मूलपृष्ठ से

176. वही

177. वही

178. नासिरा शर्मा, गूँगा आसमान (कहानी संग्रह), पृष्ठ-39

179. वही, पृष्ठ- 40

180. वही, पृष्ठ - 47

181. वही, पृष्ठ - 49

182. वही, पृष्ठ-139

183. वही, पृष्ठ - 139

184. वहीं, पृष्ठ - 145

185. वही, पृष्ठ - 146

186. वही, पृष्ठ - 146

187. वही, पृष्ठ - 146

188. नासिरा शर्मा, इनसानी नस्ल (कहानी संग्रह) के (क्लैप) से

189. वही, (फ्लैप) से

190. नासिरा शर्मा, इनसानी नस्ल (कहानी संग्रह) की (भूमिका) से, पृष्ठ- 07

191. वही, पृष्ठ 8

192. शर्मा नासिरा बुतखाना (कहानी संग्रह) दो शब्द से

193. शर्मा नासिरा बुतखाना (कहानी संग्रह), अपनी कोख, पृष्ठ -19

194. वही, पृष्ठ - 20

195. वही, पृष्ठ - 23

196. वही, पृष्ठ - 24

197. वही, पृष्ठ -26

198. वही, पृष्ठ - 27-28

199. नासिरा शर्मा, बुतखाना कहानी संग्रह (बिलाव कहानी) पृष्ठ - 75

200. वही

201. वही

202. राकेश कुमार, नारीवादी विमर्श, पृष्ठ-संख्या-67